कोसी मित्र

जनचेतना का संवाहक

अंक-1,जनवरी-अप्रैल, 2009

सलाहकार

प्रोफेसर सुरेन्द्र स्निग्ध, दिनकर कुमार

सम्पादक

डा. ओमप्रकाश भारती

सम्पादक मंडल

अनुजा सुप्रिया

डा. महेन्द्र कुमार

डा. अभय यादव, आलोक कुमार

मनोज कुमार मेहता

सहयोगी संपादक/प्रतिनिधि

अभय कुमार मनोज(सहरसा),सुभाषचन्द्र चौधरी(सुपौल)

सुभाष कुमार (मधेपुरा), निरंजन कुमार (पूर्णिया)

सम्पादकीय पता- ग्राम मनखाही, पो. मकुना, सहरसा, (बिहार)

पिन-855210

e-mail:kosimitra@yhoo.com

www:kosimitra.blogspot.com

आलेखों में विचार लेखकों के हैं। किसी भी प्रकार का न्यायिक विवाद का निपटारा सिक्किम राज्य में होगा।

सहयोग राशि- पाँच रु.

अनुक्रम

सम्पादकीय

तैरने वाला समाज डूब गया! / ओमप्रकाश भारती

मंथन और विमर्श

1.बुद्धिजीवियों की चुप्पी/8/ सुरेन्द्र स्निग्ध

2.तटबंध टूट के लिए कौन उतरदायी?/10/डा. जगन्नाथ मिश्र

3.आहूत प्रलय- कोसी तांडव गाथा/15/ ओमप्रकाश भारती

- क्यों है अभिशाप पुण्यवती सरिता
- कुसहा प्रकरण और कोसी का नया प्रवाह मार्ग
- अभूतपूर्व तबाही और सामाजिक दायित्व
- तो नदी कहाँ जाय!
- बाढ़ नियंत्रण और पारम्परिक ज्ञान
- कोसी त्रासदी एक और घृणित सच

4.कोसी तटबंध टूटने/तोड़ने का सच/28/दिनेश मिश्र

5.कोसीजल-प्रलय और बिहार की त्रासदी/31/ब्रजबिहारी कुमार

6.कोसी मैया के साथ सह-अस्तित्व का मार्ग/38/दिनकर कुमार

7.बाढ़ की जाति/40/प्रमोद रंजन

8.उत्तर कुसहा त्रासदी /46/डा. आलोक कुमार

9.कोसी ने बदला नक्शा/49/अनिल यादव

10.कुसहा टूट का 'केमेस्ट्री'/50/डा. महेन्द्र

त्रासदी सृजन

कविता/ग़ज़ल

11.बिखरी कोसी बिखरा बिहार/52/अरविंद पाण्डेय

12.कोसी, मुर्गी और दड़बा/53/डा. शांति यादव

13.यक-ब-यक आपदा आन पहुँची/56/डा. विनय कुमार चौधरी
बाढ़ में गाँव के गाँव घर बह गए

रिर्पोताज

14.मैला आंचल में जल प्रलय/57/रामाज्ञा शशिधर

15.सजन रे झूठ ही बोलो/71/राघवेन्द्र दुबे

संस्मरण

16. ''बिछिया करे अनघोल...।''/74/ओमप्रकाश भारती

प्रेरणा

17.सरकार का मुंह ताकने के बजाय
खुद नदी की सफाई करनी चाहिए/78/ गुरुचरन

पुस्तक समीक्षा

नदियां गाती हैं- कोसी नदी का लोकसांस्कृतिक अध्ययन/79/
अनुपम कुमार

सम्पादकीय

तैरने वाला समाज डूब गया!

भारतीय वेद और पुराणों में कोसी को पुण्यवती सरिता कहा गया है। उसकी प्रशस्ति गायी गई है। सभ्यता के विकास के क्रम में मानव द्वारा नदियों का दोहन आरंभ हुआ। मानव समुदाय की कोशिश रही कि नदी को उसके अनुचारिणी की तरह व्यवहार करनी चाहिए। नदी मानव मन के अनुकूल व्यवहार करे तो वो वरदान है। यदि वे अपने धर्म को निभाये तो अभिशाप। बाढ़ आना, प्रवाह मार्ग बदलना नदियों का धर्म है, उसके आचरण की अनिवार्यता है। मानव और नदियों के बीच इस अन्तरद्वन्द ने मानव के लिए नदियों को अभिशाप बना दिया। इनमें से कोसी भी इसी प्रकार की एक नदी है। कोसी के बदलते प्रवाह मार्ग और अप्रत्याशित बाढ़ के केन्द्र में उसकी भौगोलिक स्थिति और मानवीय हस्तक्षेपहै, जिसको जानना और स्वीकार करना हमारे लिए अपरिहार्य है।

1965 ई. में कोसी तटबंध बनकर तैयार हुआ। कोसी की अनियंत्रित धाराओं को तटबंधों के द्वारा नियंत्रित किया गया। तबसे लेकर आज तक कोसी सात बार तटबंधों को तोड़कर मुक्त होने में सफल रही। मसलन कोसी ने जब-जब चाहा तटबंधों को तोड़ डाला। इस तबाही में अब तक पचास हजार से ऊपर लोग कालकवलित हो चुकें हैं। बाढ़ और तटबंधों के कारण अब तक लगभग तीन लाख लोगों को विस्थापित होना पड़ा है। ये विस्थापित लोग कहां और किस स्थिति में हैं इसे जानने की आवश्यकता प्रजातांत्रिक व्यवस्था की इस सभ्य समाज को कभी नहीं रही (?)।

18 अगस्त, 2008 को कुसहा में तटबंध का टूटना अबतक की सबसे बड़ी त्रासदी है। कहा जा रहा है कि कुसहा में जानबुझकर तटबंध को तोड़ा गया। यह भले सच न हो, लेकिन इतना तो अवश्य है कि तटबंध को टूटने के लिये छोड दिया गया और तटबंध टूटने के बाद लोगों को मरने के लिये छोड़ दिया गया।

तटबंध टूटने के पांच दिनों के बाद राहत दल पहुंचा। तबतक हजारों लोग कालकवलित हो चुके थे। छोटे से देश नेपाल में लोगों को पूर्व सूचना दी गयी। गाँव खाली कर लिये गये।...। राहत दल आया। सफेद बगुला और गिद्धों के झुंड लाशों के इर्द-गिर्द मडराने लगे। स्वेच्छिक संगठन, नदी-बाढ़ विशेषज्ञ, साहित्यकारों के झुंड आ धमके। खबरिया चैनल भी आया। विशेषज्ञ ने तुर्रा छोड़ा, साहित्यकारों की लेखनी बिलख पड़ी। खबरिया चैनल के सौजन्य से- हम किस तरह बिलबिला रहे थे, डूब रहे थे उसे दुनियां भर के लोगों ने देखा।... सब कुछ शांत, कोसी मैया शांत हो गयी। बांध बंध रहा है। हम पुनः बांध टूटने की प्रतीक्षा में खामोशी से जियेंगे(?)।

दुनियां की नदियों में कोसी नदी का भौगोलिक स्वरूप बिलकुल भिन्न है। और इस भिन्नता का ज्ञान केवल कोसी अंचल के लोगों को ही है। आज विज्ञान ने भले ही पूरी दुनियां को एक मंच पर समायोजित कर

दिया है। विज्ञान के पास अचूक-चूक समाधान है, लेकिन समाज सिर्फ विज्ञान से नियंत्रित और संचालित नहीं होता। खासकर भारत जैसे देश में जहां सिर्फ कोसी नदी के बेसिन में दो करोड़ से अधिक लोग रहते हैं। यहाँ तो सामाजिक साहचर्य और दायित्वबोध जैसे आधारभूत मानवीय भावनाओं के सहारे प्रगति के पथ पर अग्रसर होना होगा। कोसी के लोगों को कोसी नदी से जुड़ा पारम्परिक ज्ञान है। आप वर्षो से तैरते रहे हैं। भला महानगरों के तरण-ताल में प्रशिक्षित तैराक आपको कोसी की धारा से कैसे बचाएंगें? आप तो तैराक हैं, फिर आपने लोगों को डूबते कैसे देखा? समय रहते आत्मविश्लेषण कीजिए। आज दुनियां भर के लोग आपसे पूछ रहें हैं- तैरने वाला समाज कैसे डूब गया!

कुसहा में तटबंध टूटने के बाद जो जान-माल की क्षति हुई वह अभूतपूर्व है। सारा दोष सरकार और व्यवस्था के ऊपर थोपा जा रहा है। हम अपनी सारी ऊर्जा इसमें लगा रहे हैं कि सरकारी चूक कहाँ हुई। सरकार तो दोषी है ही। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सरकार पर ही उंगलियाँ उठती रही है। समाज अदृश्य रहा है। प्रजातांत्रिक सरकार तो चाहती ही है कि जनता अपनी समस्याओं के प्रति अनभिज्ञ रहे। और इसके लिए तो अब हम पिछले सौ वर्षो में प्रशिक्षित और प्रवीण हो चुके हैं। सामाजिक दायित्व और भूमिका तो पता नहीं कहाँ हवा हो गयी।

कोसी नदी है और रहेगी। आने वाले दिनों में प्राकृतिक असंतुलन और 'ग्लोबलवार्मिग' के कारण नदी की स्थिति और भयावह होगी। तटबंध फिर कभी टूटेगा, हमें कौन बचाने आयेगा! क्या हम पानी में ही डूब कर मरते रहेंगे?- कुसहा त्रासदी के बाद ऐसे कई यक्ष प्रश्नों के उतर हमें देने होंगे। नई अर्थव्यवस्था (बाजारबाद) ने समाज के पारम्परिक बुनियादी साहचर्य के संबधों में उदासीनता ला दी है। व्यक्तिवादी दृष्टिकोण के चलते समाज सामूहिक दायित्व से कतरा रहा है। सत्ता लोलुप दलीय राजनीतिक पद्धति ने लोगों को भ्रमित किया है। समय रहते इस अंचल के लोगों को पारम्परिक ज्ञान और सामाजिक दायित्वबोध तथा साहचर्य की चेतना को पुनर्जीवित करना होगा। कोसी इस अंचल की प्राथमिक और सबसे बड़ी समस्या है। समाज को आगे आकर अपने दायित्व को स्वीकार करना होगा। इतनी बड़ी समस्या को सिर्फ सरकारी तंत्र के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता है।

कोसी मित्र एक खुला वैचारिक मंच है। पत्रिका में छपे तथ्यों से आपकी सहमति-असहमति हो सकती है। आप लिखेंगे। हमें मार्ग दर्शन मिलेगा।

ओमप्रकाश भारती
(अतिथि सम्पादक)

बुद्धिजीवियों की चुप्पी

सुरेन्द्र स्निग्ध

धूसर, वीरान, अंतहीन प्रांतर।// पतिता भूमि, परती जमीन, बंध्या धरती...।// धरती नहीं, धरती की लाश, जिस पर कफन की तरह फैली हुई है बालुचरों की पंक्तियां। उत्तर नेपाल से शुरू होकर, दक्षिण गंगा तट तक पूर्णिया जिले को दो संभागों में विभक्त करता हुआ- फैला-फैला यह विशाल भूभाग। संभवत: तीन-चार सौ वर्ष पहले इस अंचल में कोसी मैया की महाविनाश लीला शुरू हुई होगी। लाखों एकड़ जमीन को अचानक लकवा मार गया होगा। महान कथाशिल्पी फणीश्वर नाथ रेणु के उपन्यास 'परती परिकथा' का है यह संपूर्ण उद्धहरण। आज रेणु जिंदा तो नहीं हैं लेकिन तीन सौ वर्ष पूर्व की कोसी मैया एक बार फिर से इस भाग में महातांडव कर रही है। तब की विनाशलीला पूरी तरह प्राकृतिक थी और इस बार मानव निर्मित है। चाहे लोग इसे जितना जोर देकर प्राकृतिक आपदा कहें- यह है कोसी क्षेत्र के लोगों का सामूहिक नरसंहार। रेणु का गांव औराही हिंगना इस प्रकोप से विलुप्त तो नहीं हुआ है लेकिन ऐसे दर्जनों गांव है इस कोसी क्षेत्र में, जो अब सिर्फ इतिहास व कथाओं में ही बचे रहेंगे। इतना बड़ा नरसंहार और बुद्धिजीवियों की चुप्पी इस समाज को दहशत में भर रही है।

समकालीन हिन्दी कहानी के दो महत्वपूर्ण कहानीकार चंद्रकिशोर जयसवाल व रामधारी सिंह दिवाकर के गांव बिहारीगंज व नरपतगंज जलप्लावित हैं। त्रिवेणीगंज के रहने वाले कवि अरुणाभ सपरिवार पटना में प्रवास कर रहे हैं। मधेपुरा की गीतकार शांति यादव शहर छोड़कर दिल्ली चली गई हैं। यहीं के कवि उल्लास मुखर्जी राहत कैंप में शरण लिए हुए हैं। कवि अरविंद श्रीवास्तव पता नहीं कहां शरण लिए हुए हैं। पूर्णियां के ही एक युवा कवि ने इन पंक्तियों के लेखक को बतलाया कि हजारों-हजार की संख्या में लोग घरबार छोड़कर पशुओं और बाल-बच्चों के साथ विस्थापन का दंश झेल रहे हैं। उसने यह भी बतलाया कि यह पूरा समूह कहां जा रहा है इसका कोई ठोस जवाब नहीं। भारत विभाजन के समय भी इतना बड़ा पलायन व विस्थापन का दंश शायद लोगों ने नहीं झेला होगा। लाखों लोग बेघर हो गए हैं। कोसी ने इस बार अपने तांडव का तीन सौ वर्ष पुराना क्षेत्र ढूंढ़ लिया है।

पटना विश्वविद्यालय में कार्यरत मधेपुरा के एक प्रोफेसर कहते हैं कि जलस्तर धीरे-धीरे घट रहा है पर अपने पीछे चार से छह फीट सिल्ट (गाद) छोड़कर जाएगी। फिर से हो जाएगी धरती बंजर और पूरी की पूरी उपजाऊ धरती कास-पटेर ही उपजा पाएगी।

फणीश्वर नाथ रेणु के उपन्यास 'परती परिकथा' के गांव परानपुर, जिसके पश्चिम में बहने वाली धारा दुलारीदाय अभी जलप्लावित है। डा. एफ. बुकानन (1807-13) व डा. एलएलएसओ मेली (1911) के 'डिस्ट्रिक्ट गजेटियर ऑफ पूर्णियां' में इस कोसी नदी के बहाव क्षेत्रों का जिक्र आता है। उसी तरह 1892 में जे.

इंगलिस द्वारा लिखित 'टेंट लाइफ इन टाइगरलैंड' और 1916 में राजा कृत्यानंद सिंह द्वारा लिखित पूर्णियां- ए शिकारलैंड में भी कोसी के जल प्रवाह, स्थान परिवर्तन और उसके बाद जंगलों- कछारों में परिवर्तित होता हुआ यह क्षेत्र तरह-तरह के दु:खों की कथा का क्षेत्र बनता हुआ दिखाई पड़ता है।

पूर्णियां जिले की मिट्टी का एक-एक कण का निर्माण कोसी से ही हुआ है। भवानीपुर, ब्रह्मज्ञानी, रुपौली व सुपौलथान कोसी नदी का छाड़न है। बूढ़-पुरान कहते हैं कि यहां की कोसी रूठ गई है और पूरब की तरफ बहने लगी है।

कुंवारी कोसी को मनाना किसी के बस की बात नहीं। बुद्धिजीवियों के सामने आज यह यक्षप्रश्न है कि कोसी के इस बिगड़ैल रूप को, जो राजनीतिक कारणों से हुआ है, कौन ईमानदारी से चित्रित करेगा और कोसी के इस अश्रुमय आनन पर कौन खुशियां लौटा पाएगा।

(लेखक पटना विवि में हिंदी विभाग के वरीय शिक्षक व कवि हैं। आलेख दैनिक हिन्दुस्तान, पटना संस्करण से सभार है)

तटबंध टूट के लिए कौन उतरदायी?

डा. जगन्नाथ मिश्र

बाढ़ के रूप में इतनी बड़ी आपदा देश ने पहलीबार झेली है। अब तक उपलब्ध तथ्यों से यह स्थापित होता है कि सरकारी पदाधिकारी ने पूर्वी एफलाक्स बांध के कटाव को 5 अगस्त, से रोकने में लापरवाही बरती है। उन्हीं लोगों की कर्त्तव्यहीनता एवं तत्परता के अभाव में स्पर को टूटने से बचाने का कार्य नहीं हुआ, स्पर में टूटने से ही कोसी नदी का धारा बदली है। इस मानसून ऋतु 2008 के प्रारंभ होने के पूर्व कोसी तटबंध विशेषतया पूर्वी बांध का क्षयरोधी कार्य संबंधित पदाधिकारियों ने नहीं किया। क्षेत्रीय अभियंताओं की अनुशंसाओं और चेतावनी को सरकार ने गंभीरता से नहीं लिया और उसने इस संभावित खतरे के प्रति अपनी शीघ्रता और तत्परता नहीं दिखाई। कोसी उच्च स्तरीय कमेटी की अनुशंसाओं के अनुसार पूर्वी एफलाक्स बांध में कटाव को रोकने का उपचार नहीं किया गया। विभाग ने 2005 से स्पर, बांध, तटबंध तथा जल संचय क्षेत्रों को सुदृढ़ करने के लिए कोई अनुवर्ती कार्य नहीं किया। स्पर पर एवं तटबंध एफलाक्स पर खतरा पैदा होने की संभावना हो तो उसे 'कैटगरी-ए-रिश्क' घोषित किये जाने की परंपरा है। परंतु स्पर के कटने के अंतिम दिन तक भी कैटगरी-ए-रिश्क घोषित नहीं किया गया। 'कैटगरी-ए-रिश्क' के घोषणा के साथ ही तीनों पाली में 24 घंटे बचाव का कार्य किया जाता है, वह नहीं हुआ। 'कैटगरी-ए-रिश्क' की घोषणा के साथ ही जेनरेटर की व्यवस्था तथा हाई पावर वायरलेस को स्थापित कर मुख्यालय (सिंचाई भवन पटना) से संपर्क तत्काल स्थापित किया जाता है, वह भी नहीं हो सका। यह अत्यंत विस्मयकारी है कि न सिंचाई सचिव और न सिंचाई मंत्री ने कटाव स्थल का निरीक्षण किया पहले ऐसे संकट के समय में मंत्री और सचिव हफ्ते-महीनों कटाव स्थल पर रहकर कार्य करते थे। इसबार विभाग ने हल्केपन से इस संभावित खतरे को लिया। यह अत्यंत ही विस्मयकारी है।

कटाव निरोध कार्यों को मानसून अधिवेशन के प्रारंभ होने के पूर्व अर्थात 15.06.2008 के पूर्व कर लेना होता है। बिहार सरकार भारत सरकार के एजेंट के रूप में कोसी उच्चस्तरीय समिति द्वारा कटाव निरोधक कार्यों का कार्यान्वयन कराती है। पर्वी कोसी एफलाक्स बांध के कि.मी. 12.90 तथा कि.मी. 12.10 पर स्थित स्पर के पुनर्स्थापन कार्य के लिए कोसी उच्चस्तरीय समिति द्वारा अनुशंसित कार्यो का कार्यान्वयन मानसून अवधि अर्थात दिनांक 15.06.2008 के पूर्व पूर्ण करा लिया जाना आवश्यक था। ऐसा नहीं हुआ। इस वर्ष बाढ़ अवधि के दौरान पूर्वी कोसी एफलाक्स बांध के कि.मी. 12.90 पर स्थित स्पर पर नदी के भीषण दबाव के चलते दिनांक 05.06. 2008 से बाढ़ संघर्षात्मक कार्य कराने की आवश्यकता थी। विभाग का यह दायित्व बनता था कि कोसी नदी की धारा के कुशहा के नजदीक पूर्वी एफलाक्स बांध से सटकर बहने की परिस्थिति में इस भाग में अवस्थित स्परों के लिये ठोस एवं प्रभावी कार्य कराता परंतु ऐसा नहीं किया गया।

कोसी के एक मात्र अपस्ट्रीम के सिविल प्रमंडल जो भारदह नेपाल में स्थित था और कोसी की धारा को व्यवस्थित करता था, चूँकि इसके पास मात्र 150 फीट पश्चिमी एपलाक्स बांध था, बांकी नेपाल के ग्रामीण भू-भाग को स्पर द्वारा सुरक्षा एवं बेलका नोज (पहाड़) तक के सारे स्पर जो कोसी बराज में पानी को डिप्लेक्स करके पहुंचता था, उस प्रमंडल को समाप्त कर दिया गया। भारदह प्रमंडल का सारा पैसा भारत सरकार वहन करती थी,

फिर भी बिहार सरकार की सिंचाई विभाग ने उसे क्यों बंद किया? इस प्रमंडल को समाप्त करने से नेपाल और भारत के प्रति रवैये में बदलाव एवं घृणा का भाव आ गया और वे आक्रामक मुद्रा में आ गये। वहां के ठेकेदार, बोल्डर सप्लाइरों और मजदूरों को काम मिलना बंद हो गया। कोसी योजना के बहुत से प्रमंडलों और अंचलों, सिविल और मेकेनिकल को या तो इधर से उधर कर दिया गया या हटा दिया गया। एशिया के एक समय के सबसे बड़े मेकेनिकल वर्त साप वीरपुर को समाप्त कर दिया गया। सिंचाई विभाग के इंजिनियर बेबस व लचार रहे है। महंगाई के इस दौर में अनुसूचित दर का सालों-साल तक न बदला जाना, ठेकेदारों से इसी अनुसूचित दर से 15 प्रतिशत नीचे तक कराना, असामाजिक तत्वों द्वारा ठेकेदारी पर जबरन कब्जा और अपहरण करना, सभी इंजिनियरों के अधिकारों को सीमित कर पटना सचिवालय को दे देना भी स्थानीय स्तर पर कठिनाइयां उत्पन्न की। सिंचाई विभाग की ओर से उत्पन्न स्थिति के मुकाबले के लिए वहां पहले से क्रेट व नई सामग्री मौजूद नहीं थी। मजदूरों का अभाव था। स्थानीय लोग भी व्यवधान उत्पन्न कर रहे थे। कोसी नदी का भौतिक स्ट्रेटस एवं स्वभाव विचित्र सा है। नायलान क्रेट्स एवं बालू से भरे बोरे कोसी नदी के लिए उपयुक्त नहीं है। बोल्डर एवं बीए वायर से बने क्रेटस का पर्याप्त भंडार ऐसे स्थानों पर रहना चाहिए था। कोसी नदी के पूर्वी एवं पश्चिमी तटबंधों एवं एफलाकस बांधों पर वर्ष 1963 से सैकड़ों बार कटाव हुआ है और कई बार संवेदनशील स्थलों, तटबंधों और बांधों को बचाया भी जा सका है। लेकिन इस वर्ष कम ही डिस्चार्य में कुसहा के पास बांध का कट जाना एक बड़ा प्रश्न खड़ा करता है। 15 वर्ष पूर्व तक कटाव निरोधक कार्य नदी के तल से होता था परंतु विगत वर्षों से कटाव न्यूनतम स्तर पर किया जाना भी कोसी के लिए घातक साबित हुआ है। साथ ही अनुभवहीन एवं कर्त्तव्यहीन पदाधिकारियों के कारण स्पर को बचाना संभव नहीं हुआ। इस टूट का महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि जल संसाधन विभाग ने कोसी में पदस्थापित होने वाले अभियंताओं को कोसी के अनुभव की परंपरा को समाप्त कर दिया है। वे कोसी के चरित्र और स्वरूप को नहीं जानते हैं। हाल में पदस्थापित एवं स्थानान्तरण में वास्तविक स्थिति को ध्यान में नहीं रखा गया है। जुलाई, 2008 में बैराज अंचल में जपला में पदस्थापित कार्यपालक अभियंता को पदस्थापित किया गया है, जिन्होंने कभी कोसी को देखा ही नहीं। उसी तरह कुसहा बांध का प्रभार वैसे अभियंता को दिया गया जो सुपौल नगर परिषद में कार्यपालक पदाधिकारी थे। पूर्व में उन्हें केवल ग्रामीण सड़क निर्माण का अनुभव था। इस समय कोसी में सभी स्तर पदस्थापित अभियंताओं को कोसी का न कोई अनुभव रहा है और न उन्हें अभियंत्रण की क्षमता रही है। अभियंता विभिन्न पदों पर कार्यभार पदाधिकारी के रूप में ही पदस्थापित रहे हैं। उन्हें नियमित प्रोन्नति से वंचित रखा गया है। यह विडम्बना है कि सिंचाई विभाग में स्थायी तौर पर न तो अभियंता प्रमुख है और न ही मुख्य अभियंता। लगभग सभी मुख्य अभियंता चालू प्रभार मे है। लगभग 100 अधीक्षक अभियंता चालू प्रभार में है। इसके अलावे लगभग सैकड़ों कार्यपालक अभियंता भी चालू प्रभार में हैं अर्थात सभी के सभी अस्थायी हैं। ऐसी स्थिति में इन अभियंताओं की अनिश्चितता का सीधा प्रभाव कार्य की क्षमता पर पड़ता रहा है। ऐसी स्थिति में इन अभियंताओं की कार्यपालक अभियंता से अभियंता प्रमुख तक में मनोबल एवं सक्रियता का विचित्र परिस्थिति को दर्शाता है। अभियंताओं की सुदृढ़ता एवं सक्रियता से ही कुसहा तटबंध को बचाया जा सकता था। समुचित मात्रा में बोल्डर एवं क्रेट का स्थल पर नहीं रहना और मजदूरों द्वारा अधिक मजदूरी की मांग तथा स्थानीय लोगों के असहयोग से अनभिज्ञ अभियंताओं को नहीं मालूम था। वे सभी अपनी जान बचाने की कोशिश में लगे रहे। वे 5 अगस्त, 2008 से स्पर में लगे कटाव के मतलब को नहीं समझ सके। कोसी नदी को यदि बहने में रोक (बांध) पैदा किया जाता है तो वह स्क्वरिंग करना शुरू कर देती है, समय रहते यदि फ्ल्ड फाईटिंग करके बांध बचाया नहीं जाता है तो यह 40 फीट स्क्वरिंग कर बांध को तोड़कर निकल जाती है।

भारत-नेपाल समझौते वर्ष 1954 के अनुसार नेपाल में कार्यो हेतु नेपाली मजदूर को प्राथमिकता देनी है। ऐसा कहा जाता है कि दिनांक 17 अगस्त, 2008 को स्थल पर स्थानीय (नेपाली मूल के) लोगों द्वारा कार्य बंद करवा देने से स्थल की स्थिति अत्यंत नाजुक हो गयी, परंतु नेपाल प्रशासन द्वारा इस समस्या की गंभीरता को

नजर-अंदाज करने तथा उनके असहयोगात्मक रवैये के चलते स्थल परय स्थिति बद से बदतर होती चली गयी। परंतु इस संबंध में बिहार सरकार को 5 अगस्त को ही केन्द्र सरकार को कहना चाहिए था। अगर केन्द्र सरकार की ओर से वस्तुस्थिति की जानकारी नेपाल सरकार को दी जाती और उनसे सहयोग की अपील की जाती तो नेपाल सरकार तुरंत समुचित प्रशासनिक व्यवस्था करती। परंतु काफी दिनों बाद 18 अगस्त को मुख्यमंत्री ने केन्द्रीय विदेश मंत्री को इस परिस्थिति से अवगत कराया। अगर 5 अगस्त के बाद ही बिहार सरकार उन्हें अपनी कठिनाई से अवगत करायी होती तो संभव था इस विपदा से कोसी को बचाया जा सकता। यह निर्विवाद है कि कोसी का मामला भारत-नेपाल समझौता से जुड़ा है। भारत सरकार की नेपाल सरकार से वार्ता करने और सहयोग मांगने के लिए सक्षम है। दोनों तटबंधों की वर्त्तमान स्थिति से यह सत्यापित होता है कि पूर्वी एवं पश्चिमी तटबंधों एवं एफ्लाक्स बांध की सुदृढ़ीकरण एवं संधारण रख-रखाव से संबंधित आवश्यक कार्यो को पूरी तरह उपेक्षित रखा गया है। कुसहा का यह स्पर 600 मीटर का था, वह उस समय कटकर 283 मीटर हो चुका था। पानी के लगातार दबाव बेरोकटोक बढ़ता गया तथा 60 मीटर और कट गया, फिर भी अभियंताओं ने इस स्पर को बचाकर तटबंध को बचाने का कार्य नहीं किया। भारत सरकार तथा नेपाल सरकार को इस गंभीर परिस्थिति की जानकारी नहीं थी। विभाग ने स्थानीय लोगों को भी यह सूचना नहीं दी कि स्पर टूट रहा है तथा बांध टूटने का खतरा है। जल संसाधन विभाग ऐसे मामले पर पूर्णत: संवेदनहीन और दायित्वहीन दीखती रही। अगर पूर्व में संभावित टूट की सूचना प्रसारित की जाती तो इतनी बड़ी हादसा को कम किया जा सकता था। कोसी ने 16 अगस्त को ही स्पर को काट दिया। शाम को इसकी सूचना स्थानीय अभियंताओं को दी गई मगर तत्क्षण इसकी रोकथाम के लिए कोई प्रयास नहीं किया जा सका। 17 अगस्त को कटाव तेज हुआ तब भारतीय अधिकारियों की चिन्ता बढ़ी। 18 अगस्त आते-आते कोसी ने अपना मार्ग ही इधर से कर लिया।

कोसी बराज से लगभग दस किलोमीटर उत्तर पूर्वी बांध की स्थिति आज भी इतनी दयनीय है कि इसे देखकर टूटे हुए भाग की स्थिति का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। बांध के किनारे जंगली घास से लेकर पेड़-पौधे तक लगे हुए हैं जो कतई उचित नहीं है। यह स्थिति तब भी बनी रही जब मात्र 15 दिन पूर्व जल संसाधन विभाग के एक अधिकारी इस बांध का निरीक्षण करने आए। उन्हें किसी प्रकार की जानकारी नहीं मिली। इस संबंध में नियमित जानकारी देने की व्यवस्था ही समाप्त कर दी गई है। भारत-नेपाल के संबंधित कार्यालयों के बीच सामान्य सूचनाओं का भी आदान-प्रदान बंद हो गया है। बराज के सभी 56 फाटकों में उनका स्वीच/बरन उठाने गिराने का काम नहीं कर रहा है। बांधों के बीच बालू इतना जमा है कि दोनों ओर बीच के बाहरी क्षेत्र में गड्ढा दिख रहा है। तथ्यों से यह स्थापित होता है कि इस बार कोसी प्रोजेक्ट के संबंधित अधिकारियों ने कोई सुरक्षात्मक तैयारी नहीं की और पूर्व की अपेक्षा काफी कम बोल्डर एकत्रित किए। यदि सामान्य सावधानियां भी बरती गई होती तो नि:संदेह यह महाविनाश नहीं होता क्योंकि पूर्व की अपेक्षा इस बार कोसी में पानी कम था। सरकार की ओर से कहा जाता है कि दो माह पूर्व माओवादियों ने भारतीय अधिकारियों को बांध पर काम नहीं करबाने दिया था। यदि यह सही है तो इसकी चर्चा/शिकायत उच्चाधिकारियों तक नहीं होना एवं उस पर कोई कार्रवाई नहीं होना बिहार के अधिकारियों की लापरवाही एवं गलती है। भारतीय क्षेत्र से लेकर नेपाली क्षेत्र के लोग भी यही कह रहे हैं कि यदि माओवादियों ने काम में बाधा पहुंचायी और पैसे (लेवी) की मांग की तो इसकी सूचना दिल्ली-काठमाण्डू तक क्यों नहीं पहुंची?

बहरहाल, कोसी बांध की स्थिति आज भी खराब है। वर्त्तमान स्थिति में कुसहा के बीच भाग के सुरक्षात्मक /संघार्षात्मक कार्यों पर तकनीकी विशेषज्ञों से सुझाव भी ली जा रही है परंतु ऐसा लगता है कि सिंचाई विभाग बाढ़ के पूर्वी तटबंधों को सुदृढ़ करने में न तो सक्षम अभियंताओं को लगा पायी और न ही संरचनाओं के अनुभवी विशेषज्ञों को भी स्थल पर भेजी। इसका मुख्य कारण यह है कि अभियंताओं के स्तर निर्धारण मं सिंचाई विभाग भ्रमित रही है। अत: जल संसाधन विभाग को टूट की जिम्मेवारी से मुक्त नहीं किया जा सकता है।

(लेखक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ एवं समाज चिंतक हैं)

आहूत प्रलय- कोसी तांडव गाथा

डा. ओमप्रकाश भारती

कोसी तटबंधो का टूटना कोई नई घटना नहीं है। 1953-1954 में तटबंध निर्माण का प्रथम चरण कार्य पूरा हुआ। 1964 तक शेष कार्य को अन्तिम रूप दिया गया। तब से लेकर आज तक सात बार तटबंध टूट चुका है। मसलन कोसी ने जब-जब चाहा तटबंध तोड़ दिया। सरकारी प्रतिवेदन में तटबंध टूटने का कारण/ तोड़ने का दोषी चूहों (कम से कम चार बार) को बताया गया। जुलाई 1984, पूर्वी कोसी तटबंध के 72-80 किलोमीटर के बीच कोसी के पानी का दबाव बढ़ा। तटबंध के देख-रेख में लापरवाही बरती गई। संसाधन के अभाव में तैनात अभियंता स्थिति की भयावहता को भाँपते हुए तटबंध छोड़ कर भाग खड़े हुए। 05 सितम्बर 1984 को तटबंध टूट गया। सहरसा जिले के लगभग एक सौ गाँव कोसी की धारा के चपेट में आ गया और भयंकर तबाही हुई। कोसी ने धेमुरा नदी को अपना प्रवाह मार्ग बनाया। चूँकि 35-40 किलोमीटर के बाद ही कोसी अपने पुरानी धाराओं के साथ मिल गया, अतः अपेक्षाकृत जानमाल की क्षति कम हुई। इस बार कुसहा में तटबंध का टूटना पूर्व घटना से भिन्न है। मात्र सवा लाख क्यूसेक पानी के दबाव से तटबंध टूट गया, जबकि तटबंध 09 लाख क्यूसेक पानी के दबाव के लिये उपयुक्त है। इस घटना के बाद यह सवाल उठा कि क्या जानबुझ कर तटबंध को तोड़ा गया? यदि यह सत्य नहीं भी हो, इतना तो अवश्य है कि तटबंध को टूटने के लिये छोड़ दिया गया। तटबंध टूटजाने के बाद भी सरकारी तंत्र जिस तरह से सोती रही, शर्मनाक है और मानवता के इतिहास में काला अध्याय भी। कम से कम पैंतीस हजार लोग और एक लाख से अधिक पशु कालकवलित हो गये। कोसी की स्मृति में पहली बार इतनी अधिक संख्या में लोगों की मौत दर्ज हुई। इसमें दोष सरकारी तंत्र का तो है ही, साथ ही नदी के प्रति लोगों की अज्ञानता और सामाजिक दायित्वबोध के प्रति उदासीनता भी कम जबावदेह नहीं है।

क्यों है अभिशाप पुण्यवती सरिता

भारतीय वेद और पुराणों में कोसी को पुण्यवती सरिता कहा गया है। उसकी प्रशस्ति गायी गई है। लेकिन सभ्यता के विकास के क्रम में मानव द्वारा नदियों का दोहन आरंभ हुआ। मानव समुदाय की कोशिश रही कि नदी को उसके अनुचारिणी की तरह व्यवहार करनी चाहिए। नदी मानव मन के अनुकूल व्यवहार करे तो वो वरदान है। यदि वे अपने धर्म को निभाये तो अभिशाप। बाढ़ आना, प्रवाह मार्ग बदलना नदियों का धर्म है, उसके आचरण की अनिवार्यता है। मानव और नदियों के बीच इस अन्तरद्वन्द ने मानव के लिए नदियों को अभिशाप बना दिया। इनमें से कोसी भी इसी प्रकार की एक नदी है। कोसी के बदलते प्रवाह मार्ग और अप्रत्याशित बाढ़ के केन्द्र में

उसकी भौगोलिक स्थिति और मानवीय हस्तक्षेप है, जिसको जानना और स्वीकार करना हमारे लिए अपरिहार्य है। अब देखें की कोसी क्यों प्रलयंकारी नदी है-

♦कोसी और उसकी सहायक नदियां हिमालय पर्वतश्रेणी के सर्वाधिक भाग के हिमजल तथा वर्षा जल को समेटते हुए औसतन लगभग 25-26 हजार फीट ऊँचाई से समतल पर आती है। यह नदी अपने उद्‌गम क्षेत्र से गंगा में संगम करने तक लगभग 729 कि०मी० (भारत में लगभग 230 किलामीटर (वर्त्तमान धारा) की यात्रा में 69,300 वर्ग किलोमीटर (29,400 वर्ग किलोमीटर में, 30,700 किलोमीटर, नेपाल में तथा भारत में 9,200 वर्ग किलोमीटर) के क्षेत्र में बहती है। औसतन 26 हजार फीट ऊँचाई से नीचे आती है तथा पानी की धारा उत्तर से दक्षिण की ओर बहती है, इस कारण पानी वेग तेज रहता है, जिससे भू-क्षरण की संभावना बनी रहती है, और कटाव तेज होता है।

♦विश्व की पर्वतमालाओं में हिमालय अपेक्षाकृत नवजात पर्वत है। यह मिट्टी से पाषाण में परिवर्तित होने की प्रक्रिया में है। कोसी की वेगवान धाराओं में हिमालय की मिट्टी गाद (सिल्ट) के रूप में भारी मात्रा में प्रवाहित होती है। इस लिहाज से भूगोलवेत्ताओं ने कोसी को विश्व में गाद लाने वाली नदियों में प्रथम स्थान दिया। कच्ची मिट्टी और गाद से नदी अपने बेसिन और मुहाने को भर लेती है। और इस तरह नदी का प्रवाह मार्ग बाधित होता है, और धारा परिवर्तित दिशा में बहने लगती है। पिछले 250 वर्षों में कोसी ने पूर्व से पश्चिम की ओर 120 किलोमीटर की दूरी तय की है। इस दौरान कोसी ने लगभग बारह नदियों को अपना प्रवाह मार्ग बनाया।

♦मध्य हिमालय और उसके पाद प्रदेश में औसत से अधिक वर्षा होती है तथा यह क्षेत्र भारी वर्षा का क्षेत्र है। कोसी के ऊपरी क्षेत्रों में 1589 मि. मी. और नीचले क्षेत्रों में 1323 मि. मी. औसतन वर्षा होती है। अत: वर्षा के दिनों में नदी का जलस्तर अप्रत्याशित रूप से बढ़ जाता है।

♦मध्य हिमालय कोसी के जल वहन क्षेत्र में कई खतरनाक हिमनद और झीलें हैं। अकेले अरुण कोसी के बेसिन में 737 हिमनद और 229 विशाल बर्फ़ानी झीलें हैं, जिसमें 24 की पहचान बेहद खतरनाक झीलों के रूप में की गई है। सुनकोसी के बेसिन में 45 हिमनद है, जिसमें 10 बेहद खतरनाक है। 4 अगस्त 1985 को नेपाल हिमालय के 'हिम-शो' हिमनद के अचानक फटने से नामचे हाइड्रोपावर सहित दूध और सुन कोसी के संगम क्षेत्र लगभग 90 किलोमीटर की दूरी में अचानक प्रलयंकारी बाढ़ आ जाने से भयानक तबाही हुई। इस क्षेत्र में हिमनदों का अचानक फटना आम घटना है। हिमनद फटने से नदियों का जलस्तर अचानक बढ़ जाता है और अप्रत्याशित बाढ़ आ जाती है।

कुसहा प्रकरण और कोसी का नया प्रवाह मार्ग

वर्त्तमान में कुछ बाढ़ विशेषज्ञों का सुझाव आया है कि कुसहा में तटबंध टूटने के बाद जो कोसी का नया प्रवाह मार्ग है उसे ही दो तटबंधों के बीच बांध कर स्थिर कर दिया जाय। तत्काल यह सुझाव उचित लगता है। लेकिन यह युक्ति वैज्ञानिक नहीं है, साथ ही इसके परिणाम भी कुछ अच्छे नहीं निकलेंगे। कुसहा वही क्षेत्र है जहाँ से कोसी अपना प्रवाह मार्ग कभी पूर्व की ओर तो कभी पश्चिम की ओर बदलती रही है। पाश्चात्य नदी विशेषज्ञ शिलिंगफोर्ड ने 25 वर्षो तक कोसी नदी की धाराओं का शोध अध्ययन किया। यह शोध पत्र 1893 के एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल के जर्नल्स में प्रकाशित हुआ। इस शोधपत्र में शिलिंगफोर्ड ने कहा है कि कोसी के बदलते प्रवाहमार्ग का चित्र कुछ पेन्डूलम की गति और भ्रमण क्षेत्र जैसा है। जिसका केन्द्र कुसहा है।

कोसी पश्चिम में तिलयुगा (वर्त्तमान धारा) तथा पूरब में महानन्दा से आगे कभी नहीं गई। कोसी के पूरब से पश्चिम आने की गति, पश्चिम से पूरब जाने की गति से अपेक्षाकृत कम होती है। अत: कोसी जब पश्चिम से पूरब की ओर जाती है तो जान माल की क्षति अधिक होती है। मुझे शिलिंगफोर्ड का तर्क समीचीन लगता है। कोसी जब दोनों तटबंधों के बीच बह रही थी तो कुसहा से गंगा में मिलने तक लगभग 245 किलोमीटर का प्रवाह मार्ग बनाती है। धारा की दिशा भी कुछ अलग है। कुसहा से कोसी की धारा पहले उत्तर दिशा से दक्षिण-पश्चिम की ओर लगभग 40 किलोमीटर चलती है, उसके बाद लगभग 90 किलोमीटर उत्तर से दक्षिण की ओर तथा पूर्व दिशा में लगभग 135 किलोमीटर चलकर गंगा में मिलती है। इस तरह के प्रवाह से धारा की गति नियंत्रित और मंथर होती है, तथा कोसी द्वारा लाया गया गाद (सिल्ट) संगम के मुहाने पर पहुँचने से पहले ही खप जाता है। और कोसी का पानी अबाध रूप से गंगा में प्रवाहित होती रहती है। कुसहा में तटबंध टूटने के बाद कोसी ने नया प्रवाह मार्ग सुरसर, लोरम, और चिलोनी नदी को बनाया है। इन नदियों से होकर कोसी उत्तर से दक्षिण की ओर लगभग 115 किलोमीटर चलकर पुरानी धारा में मिलती है। तथा वहाँ से पूरब की ओर लगभग 55 किलोमीटर चलकर गंगा में मिलती है। इस तरह कोसी वर्त्तमान में 170 किलोमीटर की दूरी तय कर गंगा तक पहुँचती है। ऐसी स्थिति में एक तो धारा का वेग बहुत तीव्र है, साथ ही तीव्र वेग के कारण कटाव भी तेज होगी तथा गाद नदी की पेटी में न ठहर कर संगम के मुहाँने पर एकत्र हो जायेगी, जिससे यह स्थिति आ सकती है कि कोसी का पानी गंगा में जाने से अवरुद्ध होगा और नये तटबंधो के बीच बाढ़ की स्थिति भयावह हो जायेगी। तटबंधों को टूटने का खतरा भी सदैव बना रहेगा।

अभूतपूर्व तबाही और सामाजिक दायित्व

कुसहा में तटबंध टूटने के बाद जो जान-माल की क्षति हुई वह अभूतपूर्व है। सारा का सारा दोष सरकार और व्यवस्था के ऊपर थोपा जा रहा है। हम अपनी सारी उर्जा सरकारी चूक कहाँ हुई इस में लगा रहे हैं। सरकार तो दोषी है ही। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सरकार और व्यवस्था पर ही ऊंगलियाँ उठती रही है। समाज अदृश्य रहा है। प्रजातांत्रिक सरकार तो चाहती ही है कि जनता अपनी समस्याओं के प्रति अनभिज्ञ रहे। और इसके लिए तो अब हम पिछले सौ वर्षों में प्रशिक्षित और प्रवीण हो चुके हैं। सामाजिक दायित्व और भूमिका तो पता नहीं कहाँ हवा हो गयी। इस बार कोसी त्रासदी के पीछे की कहानी भी कुछ इसी तरह की है।

तो नदी कहाँ जाय?

कुसहा में तटबंध टूटने के बाद कोसी ने सुरसर और चिलोनी धार को अपना प्रवाह मार्ग बनाया। 1892-1910 के बीच कोसी इन्हीं नदियों से होकर बहती थी। उन दिनों इतनी तबाहियाँ नहीं हुई, क्योंकि पानी को बहने के लिए जगह थी। लोगों को बाढ़ से बचने का पारम्परिक ज्ञान था। पिछले सौ वर्षो में जनसंख्या बढ़ी, शहर बसे, सड़के बनी यानी विकास हुआ। इस क्रम में इस अंचल के लोग कोसी नदी से जुड़े ज्ञान और सामाजिक दायित्व को भूल गये। परिणाम तो सामने हैं। शहर बसने के क्रम में नदियों का अतिक्रमण किया। वीरपुर, प्रतापगंज, छातापुर, नरपतगंज, जदिया, त्रिवेणीगंज कुमारखंड, मुरलीगंज, उदाकिसुनगंज तथा मधेपुरा (इन सभी जगहों पर बड़ी तबाही हुई) आदि छोटे कस्बे और शहरों में नदियों की दुर्दशा आप देख सकते हैं। शहरों के ठेकेदारों ने नदी बेसीन को बेच दिया। मिट्टी भर कर लोगों ने अपना घर बना लिया। गाँव भी पीछे क्यों रहता, नदी बेसीन को समतल कर कृषि योग्य खेत बना लिया। पक्की सड़कें बनाने वाले अभियंता और ठेकेदारों ने अधिकतर नदियों के पेटी को भरकर मजबूत पक्की सड़क बना दिया। सीवर और साइफन व्यवस्था में खर्च अधिक होता और पैसे भी कम बचते। तो नदी कहाँ जाय! परिणाम नदी अपनी जगह रही और आप नदियों के बीच डूबते रहे। पूर्वी तटबंध से लेकर महानंदा तक सत्रह छोटी-बड़ी नदियां हैं, ये नदियां कोसी का प्रवाह मार्ग रही हैं। और लोग अब इन

नदियों का अतिक्रमण कर इसके अस्तित्व को मिटाने में जुटा है। जब कभी कोसी तटबंध टूटेगा, कोसी को गंगा तक पहुँचने के लिए प्रवाह मार्ग चाहिए जो कि अवरुद्ध है। परिणामत: भयंकर तबाही होगी। कभी कोई सामाजिक संगठन या चिंतकों ने इसका विरोध किया?

कोसी नदी को नियंत्रित करने की प्रेरणा हम चीन से ले सकते हैं। किस प्रकार चीन ने अभिशप्त ह्वांगवो नदी से जुड़ी समस्याओं का समाधान निकाल लिया। चीन में साम्यवादी सरकार है। वहाँ बाढ़ की समस्या सिर्फ सरकार की जवाबदेही ना होकर समाज की भी है। दो लाख चीनी युवकों ने छ: महीने तक श्रमदान कर ह्वांगवो के समानान्तर दूसरी नदी ही खोद डाला। जब गाद से एक नदी भरती है तो पानी की धारा दूसरे ओर मोड़ दिया जाता है। चीन हीं क्यों, कोसी के दोनो तटबंधों का निर्माण सिर्फ सरकार द्वारा निर्धारित मजदूरों ने नहीं किया था, बल्कि हजारों की संख्या में देश भर के लोगो ने श्रमदान किया था। आज इकतालीस लाख लोग बाढ़ से घिरे हैं। कोसी से पीड़ित कुल जनसंख्या लगभग दो करोड़ है। इतनी बड़ी आबादी के समक्ष कोसी जैसी नदी क्या छोटी नहीं हो जाती?

बाढ़ नियंत्रण और पारम्परिक ज्ञान

कुसहा में बांध टूटने के बाद आयी तबाही से राहत के क्रम में नौ बार नाव डूब गई और लगभग 47 लोग डूब कर मर गये। राहत दल बाढ़ में घिरे लोगों को बचाकर सुरक्षित स्थानों पर ला रहे थे। इनमें पाँच नावों के संचालक प्रशिक्षित गोताखोर थे। नाव कोसी नदी में भी डूबते रहती है, लेकिन 47 लोगों का डूब कर मर जाना दस वर्षों के अन्तराल का रेकार्ड हो सकता है। अब लोग किसके भरोसे बचेंगे।

कोसी के लोगों को बाढ़ प्रबन्धन और नाव संचालन का अदभूत पारम्परिक ज्ञान है। कुसहा के पास तटबंध का टूटना और उसके बाद की तबाही बाढ़ नियंत्रण के परिणाम का एक हिस्सा है। कोसी के संदर्भ में सरकार द्वारा बार-बार बाढ़ नियंत्रण की कोशिश की गई है, बाढ़ प्रबंध की कोई समुचित योजना नहीं बन पायी है। एक तरह से देखें तो नियंत्रण और प्रबन्धन में कार्य के स्तर पर बहुत बड़ा अन्तर नहीं है। परिणाम में बड़ा अन्तर है। नियंत्रण टूटा तो प्रलय, प्रबंधन असफल रहा तो जन-जीवन हताहत। कोसी बाढ़ नियंत्रण योजनाएँ बनी। नियंत्रण के लिए तटबंध बनाये गये। कोसी ने जब चाहा प्राय: तटबंधों को तोड़ डाला। ऐसी स्थिति में तो बाढ़ प्रबंधन का ज्ञान समाज और सरकार को होना ही चाहिए। दोनों तटबंधों को बीच लगभग चार सौ गाँवों में पन्द्रह लाख लोग रहते हैं। वहाँ भी प्रतिवर्ष बाढ़ आती है। वे जिंदा हैं। वहाँ फसलें भी होती है। इसके केन्द्र में वहाँ के लोगों को बाढ़ प्रबंधन का पारम्परिक ज्ञान है। वे लोग नदी की स्थिति और पानी के आचरण को ठीक-ठीक समझते हैं। पानी की स्थिति को देखते हुए अधिकांश गाँवों के घर बाँध की ऊंचाइयों पर बने हैं। इस अनुमान के साथ यदि उनके घरों में पानी आ जायेगा तो तटबंधों के ऊपर से भी पानी बह जायेगा।

कोसी के लोग पानी रंगों को देखकर बाढ़ का अनुमान लगाने में सक्षम हैं। मसलन वर्षा के कारण या हिमनद पिघलने के कारण या हिमनद फटने के कारण जल स्तर बढ़ेगा तो पानी का रंग अलग-अलग होगा। जैसे गेरूवा पानी हिमनद पिघलने का संकेत देता है तो मटमैला पानी अधिक वर्षा होने का। और कौन सा पानी किस स्तर तक बढ़ेगा इसका भी बखूबी अनुमान लगाने में वे सक्षम हैं। इस पूर्वानुमान से उसे संभलने या बचने के लिये पर्याप्त समय मिल जाता है। इतना ही नहीं, उन्हें वर्षा के पूर्वानुमान का भी पर्याप्त ज्ञान है। एक लोक कहावत देंखे - 'हथिया लाबें टाटी' यानी हथिया नक्षत्र सितम्बर माह आता है। दोनों तटबंधों को बीच इस समय हिमनदों के पिघलने से कोसी में भयंकर बाढ़ की स्थिति रहती है तथा सात-आठ लाख क्यूसेक पानी प्रतिदिन प्रवाहित होता है। ऐसी स्थिति में यानी हथिया नक्षत्र में यदि वर्षा हो जाय तो नदी का जल स्तर अप्रत्याशित रूप से बढ़ जायेगा और स्थिति भयावह हो जायेगी। फिर तो लोगों की 'टाटी' (फरकी) निकलेगी ही। दूसरी एक और कहावत देखें - सुनते दशहरा के ढोल, कोसी भय जाइत गोल, यानी दशहरा के दिनों में प्रथम पूजा से

लेकर दशमी तक इस अंचल के गाँवों में ढोल बजाने की प्रथा है। भला ढोल से कोसी क्या भाग जायेगी? तात्पर्य यह है कि दशहरा के आते ही मौसम में परिवर्त्तन होता है, हिमालय के पाद प्रदेश में मानसून का दबाव कम हो जाता है, तापमान घटने से हिमनदों के पिघलने की आशंका कम हो जाती है। अत: कोसी का जल स्तर घटने लगता है और बाढ़ की स्थिति समाप्त हो जाती है।

कोसी तटबंधों के बीच के लोगों को तैराकी और नाव संचालन का पर्याप्त ज्ञान है। अभी जहाँ तटबंध टूटने के बाद बाढ़ की स्थिति है यह कोसी मुक्त अंचल है। सौ वर्ष पहले यहाँ के लोगों को भी तैराकी और नाव संचालन का पर्याप्त ज्ञान था। अभी जो राहत के दौरान नाव डूबने की घटना हुई है इसमें अधिकतर घटनाएँ तेज धारा के कारण नाविक का नियंत्रण खोने या नाव का किसी न किसी अदृश्य अवरोधक से टकराने के कारण हुई है। दरअसल, कोसी के लोगो को पानी के नीचे स्थित अदृश्य अवरोधक के बारे में अदभूत ज्ञान है। यह अवरोधक कोई विशाल पेड़ का जड़ होता है या कोसी द्वारा लाये गये गाद से निर्मित 'चहटी'। किसी विशाल पेड़ के जड़ के ऊपर से जब पानी बहता है तो यह जड़ प्राय: आम जनो को नहीं दिखता है। पानी की धाराएँ सतह पर इससे टकराती है और अधिक वेगबान हो जाती है। कोसी के घटवार ऐसी धाराओं को दूर से ही पहचान लेते हैं, और नाव को ऐसे क्षेत्र में ले जाने से बचा लेते हैं। चहटी कोसी के नाविक के लिए बहुत बड़ी बला है। हो सकता है जाते हुए जिस जगह पर 20 फीट पानी हो, लौटते समय (अमूमन चार पाँच घंटे बाद) कोसी अपनी गाद से चहटी का निर्माण कर दिया हो और वहाँ सिर्फ तीन चार फीट पानी हो या बिलकुल सूखा द्वीप हो। यह चहटी दृश्य भी होता है और अदृश्य भी। अदृश्य होने की स्थिति में नाव चहटी से टकरा कर पलट सकती है। पानी जब 'चहटी' के ऊपर से बहता है तो धाराओं में सलवटें बनती है, धाराएँ छिछली और बेगवान हो जाती है। कोसी के घटवार ऐसी धाराओं को पहचानते हैं और बखूबी अपनी नाव को चहटी से बचा कर किनारे लगाते हैं।

कोसी के लोग कम से कम पाँच-छह प्रकार के नाव बनाते हैं। यह प्रकार नाव का आकार और उपयोगिता को लेकर है। घरेलू कार्य यथा मवेशियों के लिये चारा लाने, बाढ़ के दिनों में फसलों की देखभाल, शौच क्रिया, मछली पकड़ने, नदी की तेज धारा को पार करने, लम्बी दूरी की यात्रा करने और भारी सामान यथा अनाज या मवेशी आदि को ढोने के लिये अलग-अलग प्रकार की नावें बनाई जाती है। ये नाव जामुन, जलेबी और शीशम की लकड़ियों से बनती है। जामुन की नाव उम्दा समझी जाती है, उसके बाद शीशम और जलेबी। जामुन की लकड़ी से बनी नाव की औसत आयु पन्द्रह से बीस वर्षो की होती है। इन लकड़ियों की एक जैसी विशेषताएँ यह है कि यह पानी के सम्पर्क में आने से सड़ती नहीं है तथा सामान्यतया वजन में भारी होती है। कोसी की तेज धारा के लिए वजन वाली नाव हवा भरी हुई रबर की नाव के अपेक्षा ज्यादा उपयुक्त होती है। वजन वाली नाव छिछली और तेज धाराओं में संतुलन कायम रखने में सहयोगी होता है। हवा भरी हल्की नाव जो राहत दल द्वारा उपयोग में लायी जा रही है और डूब भी गयी, कोसी की धारा के लिये उपयुक्त नहीं है।

नाव के अलावे कोसी के लोग नदी में यातायात के लिये 'बेड़' और 'गेरूलिया' का उपयोग करते हैं। 'बेड़' और 'गेरूलिया' नाव जैसे ही पानी की सतह पर तैरता है। 'बेड़' बाँस के गठ्ठर को कहा जाता है। बाँस कोसी अंचल में घर बनाने के काम आता है। कोसी के गीतों में कई स्थलों पर बाँस की महत्ता की चर्चा हुई है। यदि किसी गृहस्थ को सौ-दो-सौ की संख्या में बाँस लाना होता है तो इसकी ढुलाई वे लोग नाव नहीं करते हैं, बल्कि बाँस को एक साथ 'गठ्ठर' जैसा मजबूत रस्सी से बाँध देते हैं। गठ्ठर के उपर लकड़ी का तख्ता भी बांधा जाता है और इसे कोसी की धारा में छोड़ दिया जाता है। लकड़ी के तख्त के ऊपर घटवार बैठ जाते हैं। जहाँ कहीं किसी चहटी पर बेड़ अटकता है तो घटवार लग्गा के सहारे बेड़ को आगे बढ़ाता है। यदि यात्रा दो-तीन दिनों का हो तो 'बेड़' पर चूल्हा, ईंधन और खाने-पीने का सामान भी रख लिया जाता है। 'बेड़' को

डूबने की घटना प्रायः सुनने में नहीं आया है। 'बेड़' पर यात्रा करना बेहद सुरक्षित होता है। दरअसल बाँस खोखला होता है और चारो ओर से बन्द भी, जो कोसी की धारा में नहीं डूबता है। यदि आपके पास एक पन्द्रह से बीस का बाँस हो और आप थोड़ी बहुत तैराकी जानते हों तो बाँस के सहारे आप कोसी नदी को पार कर सकते हैं।

'बेड़' से ही मिलता-जुलता साधन है 'गेरूलिया'। 'गेरूलिया' केले के 'थम्म' (तना) को एक साथ जोड़कर बनाया जाता है। केला कोसी अंचल में बहुतायात होता है। निम्न आय वर्ग के लोग जिसके पास नाव रखने की सार्मथ्य नहीं वे 'गेरूलिया' सहारे ही दैनिक कार्य करते हैं। 'गेरूलिया' बनाना बहुत ही आसान है, लागत भी नहीं के बराबर। जो केला फल दे चुका होता है, उसके तनों को काट कर चकौर चबूतरानुमा पट्टी तैयार कर लिया जाता है। केले के तनों को आपस में किसी मजबूत सरकण्डो में गूंथकर जोड़ लिया जाता है। 'गेरूलिया' पर बैठकर लग्गा के सहारे लोग कोसी की धाराओं को पार करते हैं।

लेकिन स्थिति कोसी तटबंधों के भीतर भी उलट है। अब ये पारम्परिक नाव लुप्त होती जा रही हैं। कारण है नाव के लिए उपयुक्त लकड़ियों का नहीं मिलना। दोनों तटबंधों के भीतर किसी प्रकार की लकड़ी नहीं होती है। इन लोगों को नाव बनाने की लकड़ियों के लिए तटबंध के बाहर (जहाँ अभी बाढ़ आयी हुई है) के लोगों पर निर्भर रहना पड़ता है। इस अंचल में शीशम के पेड़ एक खास किस्म की बीमारी के कारण सूख गये और अब लुप्तप्राय है। जलेबी ऐसे ही जंगली लकड़ी मानी जाती है, दूसरा कोई बढ़िया उपयोग इस लकड़ी का नहीं है, इसलिए किसी किसान का उत्साह भी इस लकड़ी को लगाने में नहीं है। जामुन के एक पेड़ विकसित होने में पन्द्रह-बीस वर्ष लग जाते हैं। भला कोसी मुक्त अंचल के लोग क्यों अपनी पड़ोसी के पीड़ा को समझेंगे, वे क्यों जामुन और जलेबी लगाने लगे। उन्हें तो सरकार ने सेमल और सागवान लगाने के लिये सहायता दी है साथ ही इसके व्यवसायिक महत्त्व को समझाया है।

कोसी नदी भले ही आज के लोगों के लिए अभिशप्त हो चुकी हो, लेकिन यहाँ की धरती कभी अभिशप्त नहीं रही। कोसी अंचल सघन जनसंख्या का क्षेत्र है। यहाँ प्रजन्न दर औसत से अधिक है। ऋग्वैदिक काल से ही यह अंचल मानवीय अधिवास का केन्द्र रहा है। बारहवीं से पन्द्रहवीं शताब्दी के बीच पश्चिम भारत की कई नदियां सूखकर मरुस्थल में तबदील हो गई। भारी संख्या में पशुचारक समाज के लोग गंगा के किनारे होते हुए कोसी कछार में आकर बस गये। यहाँ की खेतों में एक वर्ष में तीन फसलें ऊगाई जाती हैं। धान की 36 प्रजातियां यहाँ के खेतों में उपजती रही है। मछलियों का 32 प्रकार कोसी नदी में पायी जाती है। साग और सब्जियों का 56 प्रकार यहाँ उपलब्ध है। आम, लीची, केले, कटहल, अमरूद, महुआ आदि फलों से लदे बगीचे कोसी अंचल की शोभा रही है। मात्र दस से पन्द्रह फीट जमीन के नीचे पीने योग्य मीठे जल का अकूत भंडार है। तभी तो हजारों वर्षों से कोसी की त्रासदी को झेलते हुए लोगों ने यहाँ से पलायन नहीं किया।

अभी वर्तमान में कुसहा में (18 अगस्त 2008) पूर्वी तटबंध टूटने के बाद जो बाढ़ आयी उसमें तीन बच्चे अपने माँ-बाप से बिछुड़ कर गाँव में छूट गये। तीनों सगे भाई थे। बड़े भाई ने गेरूलिया बनाया और गेरूलिया के सहारे सुरक्षित जगह पर पहुँचने में कामयाब रहा।

क्या सचमुच छोटे बच्चों ने अपने पुरखौती ज्ञान के सहारे स्वयं को बचा कर समाज के समक्ष बहुत बड़ी मिसाल नहीं रख रहा है?

नई अर्थव्यवस्था (बाजारबाद) ने समाज के पारम्परिक बुनियादी साहचर्य के संबधों में उदासीनता ला दी है। व्यक्तिवादी दृष्टिकोण के चलते सामूहिक दायित्व से समाज कतरा रहा है। सत्ता लोलुप दलीय राजनीतिक पद्धति ने लोगों को भ्रमित किया है। कोसी है, बाढ़ आयेगी, तबाहिया मचेगी! जामुन, जलेबी और शीशम के पेड़ नहीं होंगे। नावें कैसे बनेंगी? बाढ़ राहत दल को पहुँचने में कम से कम तीन -चार दिन लगेंगे। क्या ये संभव है

कि सरकार प्रत्येक परिवार को एक-एक नाव उपलब्ध करा सकेंगे...! यदि नहीं तो इस अंचल के लोगों को पारम्परिक ज्ञान और सामाजिक दायित्वबोध तथा साहचर्य की चेतना को पुनर्जीवित करना होगा। कोसी इस अंचल की प्राथमिक और सबसे बड़ी समस्या है। समाज को आगे आकर अपने दायित्व को स्वीकार करना होगा। इतनी बड़ी समस्या को सिर्फ सरकारी तंत्र के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता है।

(सेंटिनल, हिन्दी दैनिक गुवाहटी 12 अक्तूबर 2008,
सम्पादकीय पृष्ठ पर प्रकाशित)

कोसी त्रासदी : एक और घृणित सच

ओमप्रकाश भारती

भारत की नदियों में कोसी एक ऐसी नदी है जिससे जुड़ी मिथक, कथाएँ और गीत सबसे अधिक प्रचलित हैं। कोसी नदी बेसिन के लोग कोसी के भौगोलिक से ज्यादा मिथकीय चरित्र को जानते हैं और उसमें विश्वास भी करते हैं। इसका सहज कारण भी समझा जा सकता है। दरअसल, कोसी नदी का बेसिन सघन जनसंख्या का क्षेत्र है। प्राचीन काल से ही यह अंचल मानवीय अधिवास के लिये उपयुक्त रहा है। यहाँ के प्रचुर प्राकृतिक संसाधनों ने मानव समुदाय को आकर्षित किया। वैदिक काल में यहाँ मानवीय अधिवास का उल्लेख मिलता है। बारहवीं से पन्द्रहवीं शताब्दी के बीच पश्चिम भारत की कई नदियाँ सूख गई। बड़े भू-भाग रेगिस्तान में बदल गया। इस अंचल के पशुचारक और कृषक समाज के लोगों ने गंगा के किनारे होते हुए कोसी बेसिन में आ कर बस गये। आरंभ में लोग नदी के बेसिन में सुरक्षित स्थल पर बसे, जहाँ नदियों के पानी का आवागमन नहीं था। कालांतर में जनसंख्या बढ़ी। भोजन की आवश्यकता बढ़ी। लोगों ने नदी के बेसिन का अतिक्रमण किया। नदी का प्रवाह मार्ग अवरुद्ध हुआ। और नदी अभिशाप और सामाजिक समस्या के रूप में प्रकट हुई। आरंभ में लोगों ने इस आहूत समस्या का सामना सामूहिक रूप से किया। नदियों से जुड़े ज्ञान सामाजिक ज्ञानकोष को समृद्ध किया। आर्थिक प्रगति हुई। सामाजिक संगठन बने। राजनीतिक चेतना का विकास हुआ। राष्ट्र का निमार्ण हुआ। राजतंत्र और फिर गणतंत्र बना। सामाजिक समस्याओं के निदान का दायित्व, राजतंत्र और गणतंत्र के अधिपतियों ने लिया। राजगद्दी, पद और कुर्सी पाने की प्रतिस्पर्धा में आश्वासन की संस्कृति समृद्ध होती गई। सामाजिक दायित्व बोध घटता गया। समाज पूरी तरह से सरकारी व्यवस्था पर आश्रित हो गया। लोग ठगे गये। विवश और हताश समुदाय ने मिथ और गीतों का सहारा लिया।

कोसी से जुड़े मिथ एवं गीतों का एक अद्‌भुत तथ्य यह है कि समाज ने विनती और शिकायत सिर्फ कोसी से ही की है। इस नदी की धाराओं की विकरालता ने आमजनों की आस्था को तोड़ा है। किसी सत्ता और सरकार ने भी इन लोगों में सुरक्षा का विश्वासभाव नहीं जगा पाया। लगता है कि आजादी से पहले तक किसी राजा या शासक ने कोसी को नियंत्रित करने या बाढ़ की समस्याओं से निजात दिलाने की पुरजोर कोशिश नहीं की। 1207 ई. में लक्ष्मण सेन द्वारा और 16वीं शताब्दी में अकबर के सामंत द्वारा बाँध बनवाने और कोसी को नियंत्रित करने का ऐतिहासिक साक्ष्य प्राप्त होता है। 1965 ई. तटबंध बनजाने के बाद भी, दोनों तटबंधों के बीच फँसे लगभग 390 गाँव के लगभग 15 लाख लोगों को भाग्य भरोसे छोड़ दिया गया। लोग अपनी पीड़ा कहे भी तो किससे। इडविन प्रीडो द्वारा संगृहित (1943, मार्च मेन इन इण्डिया में प्रकाशित) गीत संख्या-12 में लोग कोसी से कह रहे हैं कि- *सरकार भी हमारी सहायता नहीं कर रही है, इसलिए हे कोसी माय मैं पाँव पड़ता हूँ, तुम पश्चिम दिशा में चली जाओ।*

1965 में कोसी तटबंधों के अन्तिम चरण का निर्माण कार्य पूरा हुआ। बांध निर्माण के समय जनमत को किनारे रखा गया। विशेषज्ञों के बीच रस्सा –कस्सी इस बात को लेकर थी कि तटबंध का निर्माण हो या नहीं। जो भी हो अन्ततः दो तटबंधों के बीच कोसी की धाराओं को छोड़ा गया। लेकिन तटबंधों के निर्माण/मार्ग में जातिगत भेदभाव किया गया। भीमनगर बराज से आगे निकलने के बाद दोनो तटबंधों के बीच की दूरी 16 किलोमीटर है, जबकि सुपौल से आगे यह घटकर 09 किलोमीटर रह जाती है। तटबंधों को इस तरह से संकुचित करना अभियंत्रण विज्ञान के विपरीत है। बाँध का संकुचन तात्कालिन नेताओं और समाज के वर्चस्ववादी लोगों के दबाव में किया गया। सामान्य ज्ञान यही कहता है कि तटबंध ज्यों-ज्यों आगे बढ़ेगा त्यों-त्यों पानी का भंडारण भी अधिक होगा, क्योंकि नदी के आगे बढ़ने पर कई छोटी बड़ी नदियाँ उससे आकर मिलती हैं तथा वर्षा जल का भी विस्तार होता है। ऐसी स्थिति में तटबंधों को संकुचित करने से एक तो तटबंध के भीतर के गाँवों में कोसी का जलस्तर बढ़ने से बाढ़ की समस्या गंभीर हो जाती है। कोसी द्वारा अधिक मात्रा में गाद (सिल्ट) लाने के कारण नदी की पेटी भर जाती है, पानी को आगे बढ़ने में मार्ग अवरुद्ध मिलता है, जिससे तटबंधों पर पानी का दबाव बढ़ जाता है और तटबंध बार-बार टूट जाता है। कहा जाता है कि जाति विशेष के लोगों के गाँवों को बचाने के लिये बांध को संकुचित किया गया। और वर्त्तमान स्थिति और तथ्यों का अवलोकन करने पर यह तर्क समीचीन भी है।

दो तटबंधों के बीच लगभग 390 गाँव और 15 लाख आबादी है। 15 लाख आबादी में 90% दलित, पिछड़े और अल्पसंख्यक हैं। दस प्रतिशत आबादी सवर्णों की है, जो लगभग इस इलाके को छोड़ तटबंध के बाहर कोसी मुक्त अंचल में बस गये हैं। तटबंध बनने से पहले कई सरकारी वादे किये गये थे मसलन शिक्षा की सुविधा, प्रभावित लोगों को सरकारी नौकरी में आरक्षण। नौकरी तो बाद में मिलती पहले शिक्षा तो मिले। आज भी दोनों तटबंधों के बीच 15 लाख आबादी के लिये 18 माध्यमिक विद्यालय तथा 6 उच्च विद्यालय है। कालेज और विश्वविद्यालय तो बहुत दूर है। ये सारे के सारे शिक्षण संस्थान कागजी ज्यादा है, है भी तो छः महीने के लिये बंद ही रहता है। तटबंध बनने के बाद कोसी की धाराएँ ज्यादा आक्रामक हो गई और तब से अब तक 390 गाँवों में से लगभग 300 गाँव कोसी के कटाव से कटकर कम से कम दो से तीन बार विस्थापित हो चुके हैं। लगभग 150 गाँव के लोगों ने तटबंध के बाहर पुनर्वास केन्द्र में आश्रय लिया है। इन विस्थापित लोगों में जो सम्पन्न किसान हैं वे कोसी की धाराओं पर नजर रखते हैं, ज्योंही उनके खेतों से पानी हटता है या कटे हुए खेतों का भरना होता है, वहाँ वे लोग फसल लगाते हैं। परिवार के कुछ सदस्य अस्थायी फूस की झोपड़ी बनाकर अपने पशुओं के साथ कोसी के किनारे रहते हैं। जो लोग सीमान्त किसान या श्रमिक थे, वे सभी गाँव कटने के बाद शहरों की ओर रोजगार की खोज में पलायन कर गये। पलायन कर रहे लोगों का प्रतिशत पीड़ित लोगों का 60% है। इनमें अधिकांश युवा और बच्चे हैं, जो दिल्ली, कलकत्ता, लुधियाना, भदौही जैसे शहरों में मजदूरी करते हैं। भारी संख्या में लोगों के पलायन से सामाजिक साहचर्य की बुनियादी और पारम्परिक ढाँचे को आघात लगा है। कोसी के किनारे लगने वाले मेले और उत्सवों में भीड़ घटने लगी है। विस्थापन का सबसे स्थायी और भयावह दुष्परिणाम है- लोगों में भवनात्मक क्षति। कोसी अंचल और वहाँ के लोग आतिथ्य सत्कार के लिए आस-पास के अंचलों में जाने जाते थे। अब वहाँ उदासीनता देखी जा सकती है। नदी किनारे बसे गाँव में विशेषकर जहाँ नदी पार करने के लिये घाट बनी होती थी, प्रत्येक घरों में अतिथियों, मुसाफिरों के रहने की व्यवस्था होती थी। जिनकी शाम की अन्तिम नाव छूट गई तथा गाँव भी दूर है ऐसे लोग घाट के किनारे बसे गाँव में रात्रि विश्राम करते थे। लेकिन महानगरों के सम्पर्क में आने के बाद यहाँ के लोग किसी भी अजनवी अतिथि को आश्रय देने से कतराते हैं। प्रशासनिक दृष्टिकोण से यह अंचल अपराध मुक्त माना जाता रहा है। किसी तरह की सामाजिक अशांति या आतंकवाद जैसी समस्याओं से भी यह मुक्त अंचल है। यदि समय रहते यहाँ के निवासियों की समस्याओं की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया तो ये लोग भावनात्मक क्षति जैसी अपूरणीय समाजिक दाय के शिकार होते रहेंगे और परिणाम स्वरूप ये आक्रामक हो जायेंगे।

(सेंटिनल, हिन्दी दैनिक गुवाहटी 20 अक्तूबर 2008, में प्रकाशित)

कोसी तटबंध टूटने/तोड़ने का सच

दिनेश कुमार मिश्र

यमुना प्रसाद मंडल, सांसद ने डलवा में तटबंध टूटने की समीक्षा करते हुये 4 सितम्बर 1963 को कहा था कि, डलवा के निकट जो खतरनाक स्थिति उत्पन्न हो गई थी, उस ओर हमने अधिकारियों का ध्यान आकृष्ट किया लेकिन मैं यह कहते हुए लज्जित हूं कि उस दुरावस्था की ओर उस समय कदम नहीं उठाया गया। तब नेताओं को अपनी असफलता पर शर्म आया करती थी। अरसा हुआ यह रस्म हमारे बीच से उठ गई। डलवा की दुर्घटना के ठीक चार साल बाद नदी ने कोसी के पश्चिम तटबंध पर एक बार फिर कुनौली के पास हमला किया मगर तटबंध टूटने से बच गया। लोकसभा में (12 जुलाई, 1967) बार-बार इस तरह की होने वाली घटनाओं पर बहस चली। जवाब में तत्कालीन केंद्रीय सिंचाई मंत्री डा. के. एल. राव ने कहा कि नदी के बारे में कोई भी यह नहीं कह सकता कि दरार पड़ेगी या नहीं।

कोसी के बारे में यह बात खासकर कही जा सकती है, क्योंकि कोसी हमेशा पश्चिम की ओर खिसकती रही है। कोसी की इसी विशिष्टता के कारण हमें कोसी परियोजना को हाथ में लेना पड़ा है। जिसकी वजह से नदी पर लगाम कसी जा सकी और यह पिछले दस वर्षों से एक जगह बनी हुई है वरना यह दरभंगा जिले में झंझारपुर तक पहुंच गई होती! डलवा और कुनौली दोनों कोसी पश्चिम तटबंध के पश्चिम में है। जाहिर है, उस समय और उसके बाद दरभंगा में जमालपुर की दरार (1968) तक कोसी के पश्चिम की ओर जाने के रूझान को उसी तरह प्रचारित किया गया था जैसे आज उसके पूरब की ओर जाने का ढिंढोरा पीटा जाता है। कोसी के संबंध में डा. राव ने डंके की चोट इशारा किया था कि तटबंध में और खास कर कोसी के तटबंध में दरार पड़ेगी या नहीं यह कोई नहीं कह सकता। 1967 में डा. राव यह भूल चुके थे कि डलवा में कोसी तटबंध में दरार पड़ चुकी थी जबकि वहां उस वर्ष उनका कई बार आना जाना हुआ था। अब उनका 1954 का वह बयान देखिये जिसमें उन्होंने चीन में ह्वांग नदी के तटबंधों के बाद कहा था कि, क्योंकि पीली नदी (ह्वांग नदी) के तटबंध सदियों से सक्षम माने गये हैं, यद्यपि उनमें रख-रखाव और किनारों की निगरानी की समस्या के कारण समय-समय पर दरारें पड़ी हैं, कोसी तटबंध का निर्माण बराज के निर्माण से भी पहले तुरंत करना चाहिये। कोसी प्रोजेक्ट में ठेकेदारी करना कोई व्यवसाय नहीं है यह महज एक आमदनी का जरिया है। यह काम राजनीतिक संरक्षण के बिना शायद आसान नहीं होगा। जनता शायद यह समझती है कि सारी योजनाएं उसके फायदे के लिए बनती है, कागजों और फाइलों में शायद लिखा भी यही जाता है मगर नियंता इन परियोजनाओं को एक दुधारू गाय की तरह देखता है जिसकी सारी देखभाल उसे दुहने का ध्यान में देख कर की जाती है। कौन सा काम कितना जरूरी है यह व्यवस्था तय करती है। उस काम से जनता और निहित स्वार्थों

को कितना फायदा होता है, यह इसी निर्णय में निहित होता है। इस निर्णय पर न कोई अंकुश है और न फरियाद या सुझाव की गुंजाइश। डलवा में तटबंध टूटने के पहले मरम्मत में 15 लाख रुपया खर्च हुआ और टूटने के बाद की कार्यवाही में 1.15 करोड़ रुपये भटनियां का अप्रोच बांध बनाने में खर्च हुआ था, तीन लाख सत्रह हजार रुपया और टूटने के बाद मरम्मत में लगा, दो करोड़ सत्तासी लाख रुपया। जोगिनियां में राज्य सरकार ढाई करोड़ रुपया मरम्मत (या फिजूलखर्ची) के मद में बचा लेना चाहाती थी मगर उसे पांच करोड़ सत्रह लाख रुपया तटबंध टूटने के बाद खर्च करना पड़ गया और हर्जाने के तौर पर नेपाल को 19.18 लाख रुपया देना पड़ा। 1984 में नवहट्टा में तटबंधों के टूटने के ठीक एक दिन पहले ठेकेदारों को 51 लाख रुपये का भुगतान किया गया था जबकि टूटे तटबंध की मरम्मत में 8 करोड़ रुपये से अधिक खर्च हुआ है।

इस वर्ष 18 अगस्त के दिन कुसहा में कोसी तटबंध टूट गया। इस दिन नदी का प्रवाह लगभग 1.50 लाख क्यूसेक था। टूटने के कारण नदी का अधिकांश प्रवाह नदी के बाहर होने लगा। जिसकी वजह से नेपाल के पश्चिमी कुसहा, श्रीपुर और लौकही पंचायतों की लगभग 35000 हजार अबादी इस पानी के मुहाने पर आ गयी और पूरी तरह तबाह हो गयी। इसके साथ ही सामने पड़े पूर्व पश्चिम राजमार्ग का भी वहां सफाया हो गया और नेपाल का आवागमन विच्छिन्न हो गया। उसके बाद जब दरार से निकले पानी ने भारत में प्रवेश किया, तो देखते-देखते सुपौल, मधेपुरा, अररिया इसकी बाढ़ की चपेट में आ गये। धीरे-धीरे यह पानी सहरसा, कटिहरा, पूर्णियां और खगड़िया के हिस्से में फैल गया। फिलहाल जो स्थिति है, उसके अनुसार इन जिलों की लगभग 25 से 30 लाख आबादी बाढ़ की चपेट में है। जो गांव-कस्बे या शहर इस बाढ़ में फंसे हैं, वहां तक न तो बाहर से लोग पहुंच सकते हैं और न ही घिरे हुए लोग नाव के अभाव में वहां से बाहर आ सकते हैं। जब तक इन लोगों को सुरक्षित स्थान तक नहीं पहुंचाया जाता तब तक इन्हें रिलीफ भी नहीं दी जा सकती। इस तरह से लाखों लोग भूखे-प्यासे पानी से घिरे हैं और प्रशासन तथा आम आदमी किंकर्तव्यविमूढ़ होकर खड़े हैं। जीविका के एकमात्र साधन खेती का पूर्णरूप से विनाश हो चुका है और इस बात की संभावनाएं बहुत कम है कि रबी के मौसम में भी यहां खेती संभव हो पायेगी।

जब भी बाढ से घिरे लोगों से संपर्क हो पायेगा, उनके भोजन, वस्त्र, औषधि और बास स्थल की व्यवस्था करनी पड़ेगी। कुल पानी निकलने और तटबंध की दरार पाटने का काम भी होली के पहले शायद ही संभव हो सके। तब तक इतने लोगों के लिए रोजगार की व्यवस्था करना भी आसान काम नहीं होगा। यह पहला मौका है, जबकि कोसी का तटबंध भीमनगर बराज के उत्तर में नेपाल में टूटा है। इसके पहले की सारी दुर्घटनाएं बराज के दक्षिण में, 2 बार नेपाल में और 5 बार भारत में हुई है। यह घटनाएं डलवा-नेपाल 1963, जमालपुर-दरभंगा 1968, भटनियां-सुपौल 1971, बहुअरवा-सहरसा 1980, हेमपुर-सहरसा 1984, तथा जोगिनियां-नेपाल 1991 में हुई है। बराज के उत्तर में टूटने से समस्या यह आयेगी कि तटबंध के कटाव स्थल पर पानी को नियंत्रित करने में बराज का कोई फायदा नहीं मिलेगा और इंजीनियरों को दरार पाटने में लगभग उतनी ही मेहनत करनी पड़ेगी, जितनी उन्हें बराज के निर्माण के समय पानी को नियंत्रित करने में पड़ी होगी। यह काम बहुत आसान नहीं होता, खास कर तब जब मुकाबले में कोसी जैसी नदी सामने हो। सबसे दु:ख की बात है कि राज्य में 2002-03 से आपदा पबंधन का जबर्दस्त ढिंढोरा पीटा जा रहा है। 2007 में इस नौटंकी को आम आदमी के स्तर पर जून महीने में पर्यावरण दिवस के दिन उतारने की कोशिश की गयी थी। इस कोशिश का अंजाम सबको मालूम था। वैसे भी राज्य में पानी की समस्या ही मुख्य है। भले वह दक्षिण में सूखे के रूप में सामने आये या उत्तर बिहार में बाढ़ की शक्ल में मुकाबिल हो। आपदा प्रबंधन विभाग हाथ धोकर भूकंप के बारे में और इसके लिए माकूल घर बनाने की डिजाइन सिखाने पर तुला था। पानी से उसका न तो कोई लगाव था और न जल संसाधन से उसका कोई वास्ता। नतीजा हुआ कि बाढ़ और सूखा पीछे छूट गया और भूकंपरोधी

घरों के निर्माण की ट्रेनिंग यह जानते हुए भी दी जा रही थी कि राज्य में आखिरी भूकंप 1988 में और उसके पहले 1934 में आया था। इस साल की बाढ़ में कोसी आपदा प्रबंधन को ही बहा कर ले गयी। मगर इसके बावजूद न तो कोई सबक सीखा जायेगा और न यह नौटंकी बंद होगी। कुल मिला कर स्पष्टीकरण यह है कि जल संसाधन विभाग राज्य को बाढ़ व सूखे से तबाह करेगा और आपदा प्रबंधन तमाशा देखेगा। इसका दूसरा पक्ष यह है कि जल संसाधन विभाग राज्य के आपदा प्रबंधन के लिए रोजगार की व्यवस्था करेगा और फिर उसे अपने लिए रोजगार की व्यवस्था करवायेगा। इन दोनों विभागों का काम चलता रहेगा और राज्य की जनता अपनी सलामती का इंतजाम खुद कर ले। यह जरूरी है कि कुसहा में तटबंध टूटने की जांच हो, दोषी अधिकारियों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई हो और बाढ़ पीड़ितों को बचाव, राहत के साथ क्षतिपूर्ति की व्यवस्था की जाए। भविष्य में ऐसी घटना की पुनरावृति न हो, इसे सुनिश्चित करना होगा।

(लेखक बाढ़ विशेषज्ञ एवं अभियंता हैं, कोसी और महानंदा पर लिखित पुस्तक चर्चित रही)

कोसी, जल-प्रलय और बिहार की त्रासदी

ब्रज बिहारी कुमार

आखिर कोसी ने वीरपुर बाँध से 12 किलोमीटर ऊपर नेपाल के कुसहा में अपना तटबंध-तोड़ ही दिया। तटबंध के टूटने से आये जल प्लावन से जान-माल की भयंकर क्षति पहुँची है। इससे 1600 गाँव तथा लगभग तीस लाख लोग प्रभावित हुए हैं। सवा लाख हेक्टेयर जमीन के डूबने से 150 करोड़ की फसल नष्ट हुई है; लगभग नौ लाख मवेशी प्रभावित हुए हैं; लगभग तीन लाख मकानों के नष्ट होने से बीस लाख लोग गृह-विहीन हुए हैं और दसों हजार डूब मरे हैं। इस बाढ़ ने इतना समय भी नहीं दिया कि लोग खूँटे से बँधे मवेशियों को खोल सकें; भाग कर अपनी जान बचा सकें। तटबंध टूटने के स्थान के सीध में पड़ने वाले गाँव- ठटहा, मटियारी, विष्णुपुर, बिनापुर, भवानीपुर, बलुआ बजार का अस्तित्व ही नष्ट हो गया है।

इस बाढ़ ने पिछले कई दशकों से हुए विकास कार्यों- सड़कों, विद्यालयों आदि - को धो पोंछकर समाप्त कर दिया। उपजाऊ जमीन बालू से पट गयी, मवेशी मर गये। जो बचे हैं, वे चारे की कमी से मरेंगे। मधेपुरा जिला के अधिकांश भाग तथा सुपौल, सहरसा, अररिया, पूर्णियां एवं कटिहार के कई प्रखण्डों की अर्थव्यवस्था चौपट हो गयी है।

इस बाढ़ ने समाज की अच्छाइयों एवं बुराइयों को साथ-साथ उजागर किया है। बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए लोग तन मन धन से सामने आये, सरकारी तंत्र के सचेष्ट होने के पहले ही। लेकिन बाढ़ से बचाने के नाम पर औरतों से छेड़छाड़ तथा गहने छीने जाने की घटनाएँ भी हुई, एक मवेशी बचाने के बदले एक हजार माँगे जाते रहे। बच्चों की तस्करी की खबर भी आयी है। इस बाढ़ से उपजी मानवीय त्रासदी झटके देती

है मन को दुख से सराबोर करती है। एक माँ तथा उसकी पीठ पर साड़ी से बँधे उसके दो बच्चों की लाशें साथ ही पीठ पर बँधे उनके स्कूल के बस्ते; एक दूसरे से जकड़े पति-पत्नी की लाशें, बाढ़ के पानी के साथ बहती सैकड़ों मनुष्यों, मवेशियों की लाशें। किसी नहर पर 15 दिनों तक अपने दो बच्चों के साथ भूख-प्यास, धूप एवं वर्षा से प्रताड़ित वासु देवी केले के स्तम्भों की नाव बनाकर घर लौटना चाहती है, उसकी पाँच एवं एक वर्ष की दोनों बच्चियाँ फिसल कर पानी में गिरती हैं और बह जाती हैं। जिरवा गाँव का श्रमिक दिनेश साह रात के समय अचानक जगकर पाता है कि घर में पानी भरा है और उसके पाँचों बच्चे- चौदह, बारह एवं दो वर्ष की बच्चियाँ तथा नौ तथा पाँच वर्ष के बच्चे- जल में तैर रहे हैं, तभी तेज धार में घर का छप्पर ऊपर से गिरता है; त्रस्त एवं किंकर्त्तव्य-विमूढ़ दिनेश उन बच्चों, अपनी पत्नी, माता-पिता, दो बहनों (जिनमें एक के गर्भ में बच्चा था) तथा बहनों के परिवार को छोड़ तैर कर बाहर आ जाता है। सहरसा के रिलिफ कैम्प में वह लगातार अपनी सूनी आखों से किसी परिचित का चेहरा खोज रहा है जो उसे उन बिछुड़े हुओं की जानकारी दे सके। सुनीता देवी के दो बच्चे बाढ़ में डूब मरे थे। दो दिनों तक भयंकर प्रसव पीड़ा झेलती वह महिला पति को अकेला छोड़कर अपने गर्भस्थ बच्चे के साथ चल बसी। उसका पति उसे लेकर एक एक अस्पताल एक एक क्लिनिक की परिक्रमा करता रहा; प्रसवग्रस्त माँ तड़पती रही, बच्चे का हाथ बाहर निकला हुआ था, किसी डाक्टर की अन्त तक उसपर दया नहीं आयी। सैकड़ों परिवार हैं जिनका कोई न कोई मरा है, अनाथ बच्चे बेसहारा वृद्ध एवं औरतें; त्रासदी भोगने के लिए अकेला बचा परिवार का सदस्य। पिछले दिनों कोसी क्षेत्र में यह त्रासदी बार-बार दुहरायी गयी, सैकड़ों बार। प्रश्न है कि इस मानवीय त्रासदी के लिए क्या कोसी को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है?

ध्यातव्य है कि 1984 में कोसी का तटबंध सात लाख क्युसेक पानी के दबाव से भी नहीं टूटा था, वह इस बार मात्र एक लाख 77 हजार का दबाव नहीं झेल पाया। वस्तुतः पिछले पन्द्रह वर्षों से तटबंध के रखरखाव में ढील दी जाती रही थी। फिर हुआ वही जिसकी चेतावनी कोसी के अवकाश प्राप्त मुख्य अभियंता बिन्देश्वरी सिंह ने आज से ठीक दस वर्ष पहले 29.9.1998 की एक टिप्पणी में बिहार सरकार के सिंचाई विभाग को दिया था। उनके अनुसार तटबंध के ऊपरी भाग को (बराज के ऊपर भी) पूर्व या पश्चिम तरफ पाँच से दस वर्ष के अन्दर टूटना ही था। उस समय तटबंध के भीतर बालू का स्तर बाहर के गाँवों से औसतन तीन मीटर ऊपर हो गया था। जैसा कि उन्होंने लिखा था कि बाँध के भीतर का तीन मीटर पानी तटबंध पर कुल छः मीटर की ऊँचाई से चलेगा, जिससे अगल-बगल के जिलों के हजारों लोगों तथा पशुओं की जानें जायेंगी, एक मंजिला मकान पूरी तरह डूब जायेंगे; भयंकर तबाही होगी। उनकी टिप्पणी में बाँध टूटने पर नदी की धारा बदल जाने की संभावना भी व्यक्त की गयी थी।

2004 में जब नदी की धारा पूरी तरह से तटबंध से टकराने लगी, तटबंध के लिए खतरा नजर आने लगा तो फिर बाँध की मरम्मत की बात उठी। उपग्रह से प्राप्त चित्रों से प्राप्त जानकारी की मरम्मत के प्रस्ताव के साथ ही अनदेखी की गयी, जिसमें केन्द्र से आनेवाली विशेषज्ञ कमिटी की भी ऋणात्मक भूमिका रही। फिर नदी के पेटी से बालू गाद निकालने की 2007 की योजना भी अस्वीकृत की गयी। अन्ततः दिल्ली तथा पटना के सचिवालयों में फाइलें इधर उधर होती रहीं; दिल्ली एवं पटना के बीच पत्र-व्यवहार होता रहा और जैसा कि समाचार पत्रों में बिहार के जल संसाधन मंत्री के वक्तब्य से जानकारी आयी बाँध के रखरखाव के लिए केन्द्र से अत्यल्प राशि दी गयी। जहाँ तटबंध टूटा वहाँ पेड़ एवं झाड़ियाँ लगी थी; इससे पता चलता है कि वर्षों से तटबंध के रखरखाव का काम नहीं हुआ था।

कोसी कई अर्थों में विश्व की किसी भी नदी से अलग तरह की नदी है। पूर्वी नेपाल के काठमाण्डु के पूर्व के क्षेत्र में अवस्थित इसका ऊपरी जल ग्रहण क्षेत्र विश्व की दो सबसे ऊँची चोटियों- एवरेस्ट एवं

कंचनजंघा- के मध्य अवस्थित है जो विश्व की किसी भी नदी से अधिक ऊँचाई पर स्थित जलग्रहण क्षेत्र है। चतरा तक, जहाँ यह नदी पहाड़ों से उतरती है, के कुल जलग्रहण क्षेत्र है 23000 वर्गमील का लगभग 10% क्षेत्र- 2200 वर्ग मील हिम-रेखा के ऊपर का क्षेत्र है। कोसी सात नदियों/धाराओं के मिलने से बनी है; इसलिए इसे बराह क्षेत्र के पहले सप्त कोसी नाम से जाना जाता है। मुख्य नदी सुन /स्वर्ण कोसी से मिलने वाली छ अन्य नदियों - भोटिया/इन्द्रावती कोसी, ताम्बा/ताम्र कोसी, लिखी कोसी, दूध कोसी अरुण कोसी एवं तमर कोसी - में से अन्तिम दो त्रिवेणी नामक स्थान पर सुन कोसी से मिलती हैं। अरुण कोसी, जिसे तिब्बत में फिंग्यु कहते हैं, हिमालय में बहुत गहरी घाटी काटते हुए तिब्बत से आती है। सात धाराओं के मिलकर बनने से इसे सप्त कोसी कहा जाता है। उत्तरी बिहार में भी इस नदी की सहायक नदियाँ मिलती हैं, जिनमें मुख्य बागमती है, यहाँ इस बात का उल्लेख जरुरी है कि पूर्वी नेपाल के लिम्बुआन तथा सिक्किम की भाषा लिम्बु/किरान्ती में कोसी शब्द नदी का पर्याय है।

कोसी का जल प्रवाह औसतम 406 लाख एकड़-फीट का रहा है जिसका 80% मानसून के पाँच महीनों में प्रवाहित होता है। वर्षा एवं बर्फ पिघलने से सबसे अधिक औसतन दो से ढाई लाख क्यूसेक पानी जुलाई-अगस्त के महीने में प्रवाहित होता है। रिकार्ड बहाव 24 अगस्त 1954 का 8.55 क्युसेक का रहा है।

बाल्मिकीय रामायण में कोसी को एक शान्त नदी के रूप में याद किया गया है। किन्तु नदी का स्वभाव वैसा बना नहीं रहा। यह नदी चीन की ह्वांगहो की तरह ''बिहार का शोक'' बनकर उभरी। भयंकर कटाव तथा बाढ़ अगल-बगल की हरी-भरी जमीन को बालू भरकर अनुर्वर बनाना इसका स्वभाव बन गया। कोसी 65000 एकड़ फीट गाद- कंकड़-पत्थर, बालू, मिट्टी- पहाड़ों से ढोकर लाती है, जो 150 वर्गमील के क्षेत्रफल की जमीन को एक फीट ऊँचा कर सकती है। कोसी के कटाव एवं धारा-परिवर्तन का यह सबसे बड़ा कारण है। ध्यातव्य है कि कोसी विश्व की किसी भी नदी से पाँच गुणा अधिक गाद ले आती है। इसके कटाव की यह स्थिति रही है कि यह नदी मात्र 100 वर्षों में 110 कि.मी. पश्चिम घिसक गयी। कभी यह नदी फारबिसगंज, पूर्णियां, कटिहार तथा मनिहारी के बगल से बहती थी; आज पण्डौल के नजदीक से। इसके कटाव का रिकार्ड एक वर्ष में 20 कि.मी. का रहा है। एक और बात। इसके 100 वर्ष के सारे कटाव के दौरान नेपाल में बेल्का हिल के सँकरे निकास तथा गंगा में मिलने के स्थान, कुरसेला में कोई बदलाव नहीं आया। केवल इन दो स्थानें के बीच नदी गोल घुमावदार कटान करती हुई पश्चिम की तरफ बढ़ती गयी।

कोसी के विद्रोही तेवर के कई कारण हैं। नदी का जलग्रहण क्षेत्र नये कच्चे पर्वतों का है जो भू-वैज्ञानिक कारणें से अत्यधिक रोड़े-पत्थर, कंकड़, बालू, गाद पैदा करता है। नदी की ढलान किसी भी नदी से अधिक है। अत्यन्त सँकरी घाटी से गुजरने से नदी, अगल-बगल जमा नहीं कर पाती। मैदानी क्षेत्र में उतरने के पहले बाराह क्षेत्र में तो यह नदी तीन स्थनों पर सीधे खड़ी दिखायी देती है। चतरा के बाद पर्वत से निकलने के बाद भी नदी की ढलान लगभग पाँच फीट प्रति किलोमीटर है जो हनुमान नगर तक आते आते 3.2 फीट रह जाती है। इसके बाद ढलान कम होते-होते आधा फीट प्रति किलोमीटर रह जाती हैं। तेज ढलान तथा तीव्र गति कारण नदी ककड़-पत्थर बालू, गाद ढोती चलती है। चतरा से लगभग 32 कि.मी. तक यह पत्थर, कंकड़ आदि तथा बेल्का पहाड़ी के बाद बालू जमा करने लगती है। इस के दो प्रभाव पड़ते हैं:

(1) नदी का पेटी सदा बाहर की तुलना में ऊँचा होता है, जिससे बाढ़ का पानी बहुत बड़े क्षेत्र में फैल जाता है। बाढ़ के समय नदी चलते फिरते समुद्र का रूप ले लेती है।

(2) पहाड़ से निकलते ही नदी डेल्टा का रूप दिखाती हुई कई धाराओं में बँटने की प्रवृति रखती है। बिहार में कोसी की 130 कि.मी. यात्रा में इसके दुष्प्रभाव की कहानी बार-बार दुहरायी जाती रही हैं।

कोसी को बाँधने की बात 1891 से ही चलती रही। बाढ़ का हवाई सर्वे 1945 में अंग्रेज वायसराय लार्ड वावेल ने तथा 1951 में पण्डित नेहरू ने किया था। इसके बाद बाँध की बात चली; 1964 में बाँध बनकर तैयार हुआ। क्षेत्र में खुशहाली भी आयी। लेकिन वर्त्तमान त्रासदी ने सब कुछ धो-पोंछ कर एक समान कर दिया।

अत्यधिक जल प्रवाह तथा रखरखाव की कमी के चलते कोसी का तटबंध पहले भी सात बार टूटा है। अन्तिम बार लालू प्रसाद यादव के मुख्य मंत्रित्व के दौरान 18 जुलाई 1991 को तटबंध नेपाल क्षेत्र में टूटा था। इस बार माओवादियों की युवा शाखा ने अन्तिम दौर के मरम्मत के काम में बाधा पहुँचाया था तो 1991 में नेपाल एवं बिहार के बलुवा बाजार के ठीकेदारों के सम्मिलित अवरोध ने। नेपाल से अपेक्षित सहायता दोनों बार नहीं मिली। इससे अपने पड़ोसी देशों के साथ हमारे संबंधों की कमजोरी एक बार फिर सामने आयी है।

कोसी के गाद जमा करने की समस्या शुरू से रही है, लेकिन शुरू में तटबंध के मध्य नदी के पेटी की गाद नदी के तलहटी से हटायी जाती रही, जो बाद में जलस्तर से की जाने लगी। समस्या की जड़ में इस बात के अतिरिक्त पिछले 15 वर्षो की रखरखाव एवं मरम्मत की उपेक्षा भी कारक बनी। इन सबके बावजूद कम से कम इस बार तटबंध को टूटने से बचाने की संभावना तो थी ही। 5 अगस्त को कुसहा तटबंध पर नदी का दबाव बढ़ा। मुख्य अभियंता ने बिहार के काठमाण्डु स्थित पदाधिकारी अनुपस्थित थे, फोन बिल न जमा करने से कट चुका था। 9 से 16 अगस्त के बीच उन्होंने बिहार के बाढ़ नियंत्रण से जुड़े ग्यारह वरिष्ठ पदाधिकारियों को खतरे के प्रति आगाह किया। लेकिन हुआ क्या? वहाँ बालू की बोरिया तक नहीं थी; पाँच लाख वर्ग फीट पत्थर भण्डार में बिना उपयोग के पड़ा रहा। तटबंध की मरम्मत 20 अप्रील तक हो जानी थी वह अन्तिम समय तक नहीं हुआ। 18 अगस्त को तटबंध टूट गया। इसकी सूचना केन्द्र को 19 अगस्त को, भी जबकि नदी लगातार अ्कटन का विस्तार कर रही थी, नहीं दी गयी। मुख्यमंत्री नीतिश कुमार तक को इसकी सूचना बाँध टूटने के एक दिन बाद दी गयी। स्थिति ऐसी थी कि बिहार के सिंचाई विभाग की बुलेटिन बाँध के सुरक्षित होने का समाचार बाँध टूटने के एक दिन पहले तक प्रसारित करती रही। बाँध दिन के दो पहर टूटा था, लोगों को आधी रात या उसके बाद भी इसका पता न था। यदि बिहार की सड़ी गली उतरदायित्वविहीन संवेदनहीन नौकरशाही ने बाँध टूटने की सूचना समय पर दी होती तो लाखों लोग उपने पशुओं के साथ, खाने पीने का कुछ सामान लेकर अगल-बगल के ऊँचे सुरक्षित स्थानों पर चले गये होते; तब इस दुखद त्रासदी का प्रभाव काफी कम होता। नौकरशाही की कमियाँ लोगों को राहत पहुँचाने, विशेषत: गावों में, के दौरान खुलकर सामने आयी। प्रश्न उठता है कि नौकरशाही को इस स्तर तक नीचे लाने के लिए बिहार की राजनीति तथा इसके वर्तमान एवं पूर्व मुख्यमंत्री कितने उत्तरदायी हैं? उत्तरदायित्व-हीनता के लिए कोसी क्षेत्र के किसी जिलाधिकारी का स्थानान्तरण कर दिया गया। क्या स्थानान्तरण दण्ड है? यदि नहीं तो ऐसे अपराधी किस्म की उत्तरदायित्वहीनता के लिए बर्खास्तगी तथा धारा 302 के अन्तर्गत मुकदमा चलाने का प्रावधान अब तक क्यों नहीं किया गया? कोसी के बाढ़ की त्रासदी का एक दुखद पक्ष यह भी है कि इससे जुड़े केन्द्रीय मंत्री बिहार के हैं और राज्य के मंत्री सबसे अधिक प्रभाविक मधेपुरा जिले के। ठीकेदार राज्य के सिंचाई मंत्री के निकट संबंधी बताए जाते हैं।

कोसी की इस त्रासदी के लिए कोसी जिम्मेदार नहीं है। यह मनुष्य निर्मित्त त्रासदी है जिसके लिए हमारी निर्लज्ज राजनीति, संवेदनहीन उत्तरदायित्वहीन नौकरशाही, राजनीतिकों नौकरशाहों-ठीकेदारों का अपराधी गठजोड़ एवं भ्रष्ट व्यवस्था ही उत्तरदायी नहीं है। बल्कि विकास की गलत अवधारणा भी। कोसी आदि नदियों की प्राकृतिक जल निकासी की दिशा दक्षिण-पूर्व की तरफ है जबकि उत्तर भारत के प्रमुख रेल पथ तथा सड़के पूर्व-पश्चिम की तरफ चलती हैं, जिनके निर्माण में जल-निकासी के प्रावधान की कमी से जल-जमाव होता रहा है। कोसी क्षेत्र में नदी पुरानी धार पर आए या न आये, जल जमाव की समस्या से खेती तो चौपट हो कर ही रहेगी। कोसी की नहरों में भी रखरखाव की कमी से मिट्टी बालू भरा हुआ है; अत: जल निकासी में नहरें बाधक ही बनेगी। पहले नदियाँ अपने दोनों ओर मिट्टी फैलाकर जमीन को उपजाऊ बनाती थी, उनकी भीतरी सतह की गहराई बनी रहती थी; बाढ़ कम

समय के लिए तथा कम आती थी। अब वैसा नहीं होता। अब तटबंध के भीतर गाद/ मिट्टी/ बालू जमा होने से नदी की सतह बाहर से ऊँची हो जाती है; बाँध टूटते ही हैं, भयंकर बर्बादी होती है। आवश्यक है कि हम अपनी बाढ़ नियंत्रण की नीति को बदलें।

(लेखक भाषा विज्ञान एवं मानवशास्त्र के विशेषज्ञ हैं।)

कोसी मैया के साथ सह-अस्तित्व का मार्ग

दिनकर कुमार

मेरा जन्म मिथिला में हुआ और बचपन भी मिथला में ही गुजरा है। दूसरे मैथिलों की तरह कोसी मेरे लिए केवल एक नदी का नाम नहीं है बल्कि लोक जीवन से गहराई के साथ जुड़ी हुई 'कोसी मैया' है, जिसके साथ कई तरह के मिथक, रहस्य, इतिहास, लोकगीत और जीवन व्यवहार जुड़े हुए हैं। स्वाभाविक रूप से जब कोसी का बांध टूटा तो मैं अत्यंत विचलित हुआ। टीवी के परदे पर मैंने अपने लोगों को रोते-बिलखते देखा। मेरे लोग असहाय होकर उसी तरह जान बचाने की कोशिश कर रहे थे मानो किसी ने चींटियों के बिल में पानी भर दिया हो और चींटियां जिधर भी जाना चाहे उधर पानी ही पानी नजर आए। मेरे भीतर की छटपटाहट उस समय गुस्से में रुपांतरित होती गई जब मैंने देखा कि पन्द्रह दिन गुजर जाने के बावजूद तबाही का सिलसिला रूकने का नाम नहीं ले रहा था। जब मैंने देखा कि मानवीय त्रासदी के नाम पर संवेदनशून्य राजनेता अपनी-अपनी रोटी सेंकने की कोशिश कर रहे थे। जब मैंने देखा कि सिर्फ सरकारी लापरवाही और भ्रष्ट तंत्र की अकर्मन्यता की वजह से बांध टूट गया और एक विशाल आबादी का ताना-बाना बिखर कर रह गया।

उसी दौरान असम में भी बाढ़ आई हुई थी। प्रधानमंत्री ने बिहार का दौरा कर बाढ़ राहत के लिए विशेष आर्थिक पैकेज की घोषणा की। असम में विपक्षी पार्टियों ने प्रधानमंत्री पर भेद-भाव का आरोप लगाया और कहा कि उन्हें असम के लिए भी विशेष पैकेज की घोषणा करनी चाहिए। बिहार को सभी राज्य सरकारें मदद भेज रही थी। असम के मुख्यमंत्री तरुण गोगोई ने अपनी तरफ से पांच लाख रुपए की मदद देने की घोषणा की। फौरन उनका विरोध शुरू हो गया। असम से ट्रकों में कुछ राहत सामग्रियां बिहार भेजी जा रही थीं। उन ट्रकों को छात्र संगठनों ने घेर लिया और उन्हें बिहार जाने की अनुमति नहीं दी। एक असमिया अखबार की युवा पत्रकार मुझसे इंटरव्यू लेने आई और उसने एक सवाल पूछा कि केन्द्र जहां बिहार को बाढ़ से निपटने के लिए विशेष आर्थिक पैकेज दे रहा वहीं असम को विशेष पैकेज क्यों नहीं दे रहा है? मैंने कहा कि बिहार में बाढ़ नहीं आई है, सुनामी आ गई है। बिहार को सचमुच मदद की जरूरत है। असम में बाढ़ आई है, कोई सुनामी की स्थिति पैदा नहीं हुई है।

कोसी की तबाही जब चल रही थी तब सहारा चैनल ने चौबीस घंटे तबाही के कवरेज का इंतजाम कर रखा था। चैनल के प्रमुख संजय मिश्र स्वयं कोसी क्षेत्र में मौजूद थे और भावुक स्वर में कह रहे थे कि कम से कम पचास हजार लोग जल समाधि ले चुके हैं। दूसरी तरफ सरकार के आंकड़ों में सौ से भी कम लोगों के मरने का उल्लेख किया गया। फिर किसी वेबसाइट पर मैंने देखा कि लाशों को गायब करने के लिए सरकार खास किस्म के रसायन का इस्तेमाल कर रही है। मेरा सवाल है कि कोसी की तबाही में मरने वालों का वास्तविक आंकड़ा आज तक क्यों नहीं जारी किया गया है? क्या कभी भी मृतकों का वास्तविक आंकड़ा सामने आ पाएगा?

दूसरा प्रश्न मुझे लगातार विचलित कर रहा है कि आने वाले समय में ऐसी तबाही को रोकने के लिए क्या कारगर उपाय किया गया है? कई रिर्पोटों को पढ़कर निराशा और बढ़ जाती है। पता चलता है कि बांध टूटने की पूर्व सूचना देनेवाले इंजीजियर का तबादला कर दंडित किया गया। बांध की मरम्मत इसीलिए नहीं हो सकी चूंकि कमीशन के लिए ठेकेदार और अधिकारियों के बीच झगड़ा हो गया। और भी कई सवाल हैं, जो किसी भी संवेदनशील व्यक्ति को परेशान कर सकते हैं। बाढ़ में फंसे ग्रामीणों को लूटा गया, महिलाओं की इज्जत लूटी गई। जातिगत घृणा के आधार पर एक जाति ने दूसरी जाति की मदद नहीं की। जातिगत नजरिए के आधार पर राहत और पुनर्वास का काम चलाया गया। मानव तस्करों ने बाढ़ में अनाथ होने वाले बच्चों को गायब कर दिया। अपनी जीमन और जीविका से उजड़े हुए लाखों लोगों की सहायता के लिए शासनतंत्र ने आज तक कोई ठोस इंतजाम नहीं किया।

ऐसी विषम परिस्थिति में भी मुझे अपने लोगों की जिजीविषा पर विश्वास है। मुझे विश्वास है उन सकारात्मक शक्तियों पर जो बगैर किसी सरकारी मदद के बाढ़ में उजड़े लोगों को नए सिरे से जीवन शुरू करने में मदद कर रही हैं। मुझे विश्वास है अपने लोगों के हौसले पर जो भ्रष्ट व्यवस्था की तरफ से प्रायोजित विनाश लीला के अनुभव से और भी अधिक मजबूत बनेंगे और 'कोसी मैया' के साथ सह-अस्तित्व का मार्ग तलाश लेंगे।

(लेखक कवि एवं आलोचक हैं, वर्त्तमान में सेंटिनल हिन्दी दैनिक, गुवाहटी के सम्पादक हैं।

बाढ़ की जाति

प्रमोद रंजन

मैं जो कुछ बताने जा रहा हूं वह एकबारगी तो मुझे भी अविश्वसनीय लगा। ज्यों-ज्यों कड़ियां जुड़ती गयीं, तस्वीर साफ होती गयी, यह बाढ़ आयी नहीं, लाई गयी है। कुसहा तटबंध तोड़ा तो नहीं गया लेकिन उसे टूटने का भरपूर मौका दिया गया। विपदा के बाद राहत कार्यो में सरकारी मशीनरी खुद ब खुद अक्षम साबित नहीं हुई, उसे अक्षम बनाये रखा गया। जातिवाद के लिए चर्चित बिहार में अंजाम दी गयी यह कथित लापरवाही, वास्तव में कम से कम आजाद भारत की सबसे बड़ी सुव्यवस्थित जाति आधारित हिंसा है। वर्ष 2008 के 18 अगस्त को कोसी क्षेत्र में आयी बाढ़ में सरकारी आकड़ों के अनुसार कम से कम 25 लाख लोग तबाह हुए हैं। एक पुख्ता अनुमान के अनुसार लगभग 50 हजार लोग मारे गये हैं।

कोसी अंचल के दलित जब बिल में पानी जाने के बाद बिलबिलाती चींटियों की तरह मर रहे थे; यादवों के पशु, घर, खेत सब कोसी की धार में बहे जा रहे थे, ऐसे समय में सत्ताधारी दल जनता यूनाइटेड के राष्ट्रीय प्रवक्ता के बयान ने स्पष्ट किया कि राज्य सरकार ने इन्हें बचाने की कोशिश क्यों नहीं कर रही। जदयू के राष्ट्रीय प्रवक्ता शिवानंद तिवारी ने विपक्षी राष्ट्रीय जनता दल के सुप्रीमो लालू प्रसाद की सक्रियता पर टिप्पणी करते हुए कहा कि 'भाई का दर्द भाई ही समझता है'। प्रेस को जारी इस बयान में तिवारी ने कहा कि चूंकि इसके पहले आयी बाढ़ से सहरसा, मधेपुरा (यादव बहुल जिले) नहीं प्रभावित होते थे इसलिए लालू इतने सक्रिय नहीं होते थे। 'भाई' की प्रीड़ा ने उन्हें इतना संवदेनशील बना दिया है कि वे इसके बीच कूद पड़े हैं। इस फूहड़ बयान के निहितार्थ गंभीर हैं। यह सच है कि बाढ़ग्रस्त इलाका यादव बहुल है, इसके अलावा वहां बड़ी आबादी अत्यंत पिछड़ो और दलितो की है। (सहरसा, सुपौल और मधेपुरा के बाढ़ग्रस्त इलाकों से गुजरते हुए, राहत शिविरों में बातचीत करते हुए, मुझे महसूस हुआ कि यहां दलितों की आबादी भी बहुत ज्यादा है) लगभग 30 विधान सभा सीटों वाला बाढ़ से प्रभावित हुआ यह क्षेत्र लालू प्रसाद को बिहार की सत्ता में बनाये रखने का एक बड़ा कारण रहा था। लेकिन पिछली बार पासा पलट गया। कहते हैं कि उस समय इलाके के यादव लालू से नाराज हो गये थे। राष्ट्रीय जनता दल के एक कद्दावर नेता बताते हैं कि 'राजद को बिहार की सत्ता से बेदखल करने में बड़ी भूमिका इस क्षेत्र की रही'। पिछले विधान सभा चुनाव में इन जिलों की अधिकांश सीटें राजद हार गया। अभी इस क्षेत्र की कुल 28-30 सीटों में से 22-23 विधायक जदयू अथवा भाजपा के हैं। इसके बावजूद राजग की ओर से यह बयान आया कि यादव होने के कारण लालू इस क्षेत्र के लिए चिंतित हैं। बयान बताता है कि इस विकराल आपदा के समय बिहार में सिर्फ घृणित राजनीति ही नहीं चल रही है। इसके पीछे जातिवाद का चरमावस्था है। ऐसा कुत्सित जातिवाद, जो यह हुंकार भरता फिर रहा है- यादवों, दलितों, अति पिछड़ों! तुम्हारे समर्थन का भी हमारे लिए कोई मोल नहीं है।

यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि बिहार में जाति-शत्रुओं के सफाये कि लिए बाढ़ के रूप में सुव्यवस्थित हिंसा की नयी तकनीक लागू की गयी। इस तकनीक ने नरेंद्र मोदी के प्रयोगों को भी पीछे छोड़ दिया। नरेंद्र मोदी वंदे मातरम् गाने वालों का बख़्श देने की बात करते हैं। लेकिन यहां लाखों लोग राज्य सत्ता

को समर्थन देने के बावजूद सिर्फ इसलिए अपने हाल पर छोड़ दिये गये क्योंकि वे यादव थे, दलित थे। उन्होंने राजग को वोट किया था तो क्या, वे अवधिया कुर्मी अथवा भूमिहार तो न थे। इसे नीतीश कुमार के नेतृत्व में राज्यसत्ता में आयी एक स्वर्ण जाति की कुंठा के विस्फोट के रूप में भी देखा जा सकता है। लालू प्रसाद के शासन काल में यादवों के मातहत रहने का दंश उन्हें 17-18 वर्षो से सता रहा था। उन्हें यह 'सुख' है कि कीड़े-मकोड़ों की तरह बिलबिलाओं सालों, देखते हैं, कौन क्या कर लेता है!

नेपाल में कुसहा के पास तटबंध टूटने की सूचना भीमनगर बैराज के पास तैनात मुख्य अभियंता सत्यनारायण ने नौ अगस्त को ही बिहार सरकार को दे दी थी। यह एक पूर्णतः प्रमाणित हो चुका तथ्य है, जिसका खुलासा इस इंजीनियर को डिमोट कर स्थानांतरित कर देने के बाद हुआ। इसके अलावा अन्य श्रोतों से भी तटबंध में रिसाव होने सूचना बिहार के सत्ताधीशों को थी। लेकिन इसे रोकने की कोशिश करने की बजाय तटबंध मरम्मती नाम 'माल' बनाने की कोशिशें की जाती रहीं। परिणाम यह हुआ कि 18 अगस्त को तटबंध टूट गया। (कुछ लोग इसके टूटने की तारीख और पहले बताते हैं) पानी लाखों लोगों का आशियाना उजाड़ते, हजारों की जान लेते रोजाना नये इलाकों की ओर बढ़ता गया।

तटबंध टूटने से छूटे लगभग डेढ़ लाख क्यूसेक पानी से 18,19 और 20 अगस्त को जिन बस्तियों की सीधी टक्कर हुई, वे तो उसी समय नेस्तनाबूद हो गयी। झुग्गी-झोपड़ियों दलितों के टोलों में तो न कोई आशियाना बचा, न जानवर, न एक भी आदमी। जगले 7-8 दिनों तक पानी कोसी की नयी (मुख्य) धार के आसपास के गांवों की ओर बढ़ता गया। लोग अकबकाए चूहों की तरह, जिधर राह मिली, भागने लगे। सब ओर पानी ही पानी। रास्ते का अता-पता नहीं। कोसी की विकराल, हहराती, कुख्यात तेज धारा। डूब कर मरने वालों में-पैदल भाग रहे लोगों, केले के पेड़ों, लोहे ड्रामों, धान उसनने वाले कठौतों आदि का सहारा लेकर निकलना चाह रहे लोगों की संख्या कितनी रही, यह हम कभी नहीं जान पाएंगे। कितनी निजी नावें पलटी, कितनों को स्थानीय अपराधियों ने पानी में फेंका, कितनी महिलाओं के जेवर छीने गये, कितनों ने अस्मत गंवायी। क्या कभी सामने आएगा इनका आंकड़ा?

उधर यादव-दलित डूबते जा रहे थे और इधर सत्ताधारी जनता दल युनाइटेड प्रधानमंत्री से मिलने के लिए 500 पृष्ठों का दस्तावेज तैयार कर रहा था। लेकिन यह कागजात बाढ़ से संबंधित नहीं थे। यह कागजात थे रेलमंत्री द्वारा कुछ कट्ठा जमीनें लिखवा कर रेलवे की नौकरियां बांटने के। 18 अगस्त को तटबंध टूटने, सैकड़ो बस्तियों के बह जाने, हजारों लोगों के मारे जाने की सूचनाओं के बीच 6 दिन गुजारने के बाद-23 अगस्त को -जनता दल यूनाइटेड के राष्ट्रीय अध्यक्ष शरद यादव, राष्ट्रीय प्रवक्ता शिवानंद तिवारी, प्रदेश अध्यक्ष ललन सिंह व केसी त्यागी जब भाजपा के उपाध्यक्ष मुख्तार अब्बास नकवी की अगुवाई में प्रधानमंत्री से मिले तो उनके सामने बाढ़ कोई मसला नहीं था। वे सिर्फ यह चाहते थे कि लालू प्रसाद को केन्द्रीय मंत्रीमंडल से बाहर कर दिया जाए। मुख्यमंत्री ने बाढ़ क्षेत्र का हवाई सर्वेक्षण पहले 20 अगस्त को और फिर 24 अगसत को किया। तब तक भारी तबाही हो चुंकि थी। उन्होंने देखा होगा कि पानी सैकड़ों बस्तियों को लील चुका है। हजारों लोग मारे जा चुके हैं। लेकिन अब भी उनका ग्लेशियर सा हिंसक ठंडापन बरकरार था। बिना हो-हंगामे के जितना डूब सके, डूबे हरामी! 24 अगस्त को हवाई अड्डा पर प्रेस कांफ्रेस में तथा 26 अगस्त को रेडियो से जनता के नाम 'संदेश' देते हुए मुख्यमंत्री ने कहा कि बिहार में प्रलय आ गया है। लोग दान देने के लिए आगे आएं। हजारों लोगों की मौत के बाद, बाढ़ के 9वें दिन रेडियो पर मुख्यमंत्री द्वारा पढ़े गये इस संदेश की भाषा में 'भावुकता' कूट-कूट कर भरी गयी थी। मुख्यमंत्री ने अपील की कि लोग बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों से बाहर निकलें। सरकार सब व्यवस्था करेगी!

जाहिर है, राज्य सरकार न सिर्फ तटबंध की सुरक्षा बल्कि बचाव-राहत कार्य में भी सुस्त बनी रही। सरकार के खैरख्वाह समाचार माध्यमों के माध्यम से अपना तीन साल पुराना तकिया कलाम दुहराते रहे कि यह सब कुछ पिछली सरकार का किया धरा है। लालू ने तटबंध मरम्मती के लिए कुछ किया ही नहीं।

रेलकर्मी का जातिवाद

राज्य सत्ता ने ऐसा किया तो जाहिर है, यह अनायास नहीं रहा होगा। जाति बिहार के रग-रग में कूट-कूट कर भरी है।

बिहार में भारी तबाही की खबर सुनकर मेधा पाटेकर बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों के दौरे पर पहुंची। उनके कार्यकर्ताओं द्वारा मुंबई से लायी जा रही राहत सामग्री (कपड़ों से भरी 31 बोरियां) एक रेल कर्मी उदयशंकर सिंह ने बरौनी स्टेशन पर फेंक दी। ये कार्यकर्ता मेधा के नेतृत्व में मुंबई की झुग्गी-झोपड़ी वासियों के हित में चलने वाले 'घर बचाओ' आंदोलन से जुड़े थे और नीची जातियों से आते थे। कार्यकर्ता लाल बाबू राय, अतीक अहमद, बाबूलाल और राजाराम पटवा ने इस संबंध में की गयी शिकायत में लिखा है कि 'सभी सामान फेंकने के बाद कैपिटल एक्सप्रेस के गार्ड उदयशंकर सिंह ने अभद्र गालियां देते हुए कहा कि कहां से दलित हरिजन का कपड़ा उठा कर ले आया है। ऐसा बोलते उसने सफाई कर्मचारी से डिब्बे में झाड़ू लगवाया। उसके बाद गार्ड बॉक्स में रखे गोमूत्र एवं गंगाजल की शीशी निकाल कर गंगाजल एवं गोमूत्र का छिड़काव किया।'

मेधा पाटेकर ने इस घटना की जानकारी मिलने के बाद इन पंक्तियों के लेखक से कहा कि वह इस सूचना से बेहद व्यथित हैं। बिहार के जातिवाद के बारे में उन्होंने सुना तो था लेकिन यह आज के समय में भी इतना विकराल होगा, इनका अनुमान उन्हें न था। मेधा के चाहने पर एक समाचार पत्र में 'सामान फेंका जाने' की सूचना देती छोटी सी खबर छपी। लेकिन उसमें इस बात का जिक्र न था कि सामान क्यों फेंको गया। लालू प्रसाद ने मेधा को फोन और रेलवे के एक उच्चाधिकारी को उनसे माफी मांगने को कहा। गार्ड उमाशंकर सिंह सस्पेंड किया गया। जब लालू प्रसाद का फोन आया मेधा के साथ हम सुपौल जिला के छुरछुरिया धार के पास से लौट रहे थे। वहां सेना द्वारा चलाए जा रहे रेस्क्यू ऑपरेशन के पास राहत सामग्री वितरित करते हुए मेधा ने 35-40 मौतें (सिर्फ उसी स्थान पर) रिकार्ड की थीं, जबकि उस समय तक राज्य सरकार बाढ़ में मरने वालों की कुल संख्या महज 25 बता रही थी। मेधा इस सबसे बेहद विचलित थीं। लालू प्रसाद ने भी उन्हें फोन पर बताया कि कम से कम 50 हजार लोग मरे हैं, सरकार लगातार झूठ बोल रही है। उनका कहना था कि नीतिश पुनर्निर्माण कार्य जनवरी-फरवरी तक शुरू करेंगे ताकि लोकसभा चुनाव में इसका लाभ ले सकें। मेधा ने लालू प्रसाद को कहा कि राष्ट्रीय आपदा घोषित हो जाने के बावजूद इसे लेकर अभी तक केंद्रीय मंत्रीमंडल की बैठक नहीं हुई है। जबकि नियमानुसार, राष्ट्रीय आपदा को लेकर केंद्रीय मंत्रिमंडल की बैठक तुरंत होनी चाहिए थी, जिसमें पीड़ित क्षेत्रों के कृषि-स्वास्थ्य आदि मसलों पर निर्णय लिया जाता। यह सब 5 सितम्बर की बात है। 'घर बचाओ' आंदोलन के कार्यकर्ताओं से दुर्व्यवहार करने वाला सस्पेंड हो चुका था। 6 सितम्बर को इससे संबंधित समाचार भी सभी अखबारों में छपा। लेकिन मेधा चाहती थी कि उस रेलकर्मी का जातिवादी व्यवहार भी अखबारों के माध्यम से सामने आये। उनहोंने मुझसे कहा कि सामान फेंकने से बहुत ज्यादा गंभीर और धक्का पहुंचाने वाली वह जातिवादी प्रवृति है। इसे अखबारों को उठाना चाहिए। लेकिन मेधा को बिहार की सवर्ण मीडिया की बारीक बुद्धि की जानकारी न थी। सिर्फ मेधा ही क्यों, मैं भी तो लगभग इससे अन्जान ही था, तभी तो इसके लिए असफल कोशिश की।

सत्ता विहीन सवर्णों का दुःख

बाढ़ क्षेत्र के दौरा करते हुए मैं अपनी रिपोर्ट तैयार करने कि लिए सहरसा में एक कायस्थ परिवार का कंप्यूटर इस्तेमाल करता रहा था। इस परिवार का मधेपुरा स्थित घर डूबे थे। इनमें अधिकांश कायस्थ थे। इन सबके

अनेक परिजन सहरसा में ही राहत शिविरों में आश्रय लिये थे। अपनी छोटे-छोटे किराये के कमरों में वे कितनों को जगह देते? रोजाना दिन भर बाढ़ पीड़ितों का इनके यहां आना-जाना लगा रहता था।

इनमें से कई परिवार ऐसे थे, जिनके मामा, चाचा, बहन या ससुराल के गांवों में लोग अब फंसे थे। उन्हें निकालने के लिए न कोई नाव पहुंच रही थी, न ही राहत सामग्री। वे चाहते थे कि मैं बतौर पत्रकार संबंधित जिले के जिलाधिकारी से बात कर उनके गांवों में नाव भिजवाने की व्यवस्था करूं। मैंने कोशिश भी की लेकिन नतीजा सिफर रहा। मुझे ऐसा तो नहीं लगा कि संबंधित जिलाधिकारी ने जानबुझ कर उन गांवों में नाव नहीं भेजी; पर मेरी असफलता पर उन किरायेदारों की राय रोचक थी। उनका कहना था कि कुछ भी कर लीजिये हम फारवडों के लिए यह सरकार कुछ भी नहीं करेगी।

9/11 बनाम 8/18

11 सितम्बर को अमेरिका में हवाई हमले में लगभग 5 हजार लोग मारे गये थे। आज भी उनकी याद में मोमबत्तियां जलाई जाती है। भारतीय मीडिया भी इन तस्वीरों को प्रसारित करता है। क्या 18 अगस्त की याद में, जिसमें 50 हजार लोग मारे गये, भी मोमबत्तियां जलाई जाएंगी? क्या हमारा देश इसे एक काले दिन की तरह याद करेगा? उत्तर है- नहीं। कारण; हम-आप सब जानते हैं।

और अंत में

आज 12 सितम्बर की सुबह है। दो दिन पहले ही बाढ़ क्षेत्र से पटना लौट आया हूं। अखबार देख रहा हूं। कई अखबारों में 11 सितम्बर को अमेरिका में जलाई गयी मोमबत्तियों और उस हमले में मारे गये लोगों के परिजनों की व्यथाएँ छापीं हैं। पटना से प्रकाशित हिंदुस्तान में एक खबर है। 'केमिकल से नष्ट होंगे पशुओं के शव: सुशील कुमार मोदी भारतीय जनता पार्टी के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष व बिहार के उपमुख्यमंत्री हैं। खबर इस प्रकार है-' उपमुख्यमंत्री ने बताया कि केमिकल की खेप गुजरात से चल चुकी है। इसके जरिए पशुओं के शवों को मिनटों में नष्ट किया जा सकता है। इससे बदबू और महामारी फैलने की आशंका नहीं रहेगी.. पहली बार राज्य सरकार की ओर से व्यस्थित ढ़ंग से राहत कार्य चलाया जा रहा है'।

केमिकल, पशुओं के शव के लिए? और मनुष्यों के उन हजारों शवों के लिए क्या, जो झाड़ियों, बांसबाड़ियों व उंची मेड़ों के किनारे पड़े रहे हैं। बाढ़ आए लगभग एक माह होने को आ रहा है। राज्य सरकार की ओर से मनुष्यों के शवों की चिंता करता कोई बयान अभी तक नहीं आया है। सुशील मोदी बता रहे हैं कि केमिकल 'गुजरात' से आ रहा है। (और शायद 'आइडिया' भी)। राज्य सरकार की ओर से पहली बार 'व्यवस्थित ढ़ंग' में ठिकाने लगाया जाएगा। न बदबू होगी, न आक्रोश फैलेगा। आखिर कुछ समय बाद ही वहां कई हजार करोड़ रुपयों का पुनर्निर्माण कार्य करने जाना है.... और, मनुष्य मरे भी कहां हैं? मरे तो शूद्र हैं। भाजपा जिस मनुवाद में विश्वास करती है उसके अनुसार शूद्र और पशु एक समान होते हैं।

(लेखक सामाजिक कार्यकर्त्ता एवं पत्रकार हैं)

उत्तर कुसहा त्रासदी

डा. आलोक कुमार

कुसहा तट बंध को टूटे हुए लगभग पाँच महीने बीतने को है। तटबंध के टूटने (18 अगस्त 2008) के पश्चात् जो मंजर दुनियां ने देखी, इसकी कल्पना हमारे पूर्वजों ने अवश्य की होगी। इन सबों से निजात दिलाने हेतु तात्कालीन सर्वोत्तम तकनीक से तटबंध निर्माण की योजना बनी और कोसी की अनियंत्रित धाराओं को नियंत्रित करने का ठोस व व्यावहारिक प्रयास किया गया। लेकिन कतिपय कारणों से योजना को सम्पूर्ण रूप में लागू नहीं किया गया। बराह क्षेत्र में हाईडैम का निर्माण, पश्चिमी नहर निर्माण, डूब क्षेत्र (प्रभावित क्षेत्र) की आबादी हेतु मुकम्मल पुनर्वास, तटबंध के रख-रखाव की फूल-प्रूफ व्यवस्था और जमा हुए गाद की सफाई (डिस्ल्टींग) आदि। यही वजह है कि इस योजना को अभी तक वरदान में बदला नहीं जा सका है। अनुमानित सिंचाई और पनबिजली प्राप्ति का लक्ष्य भी आधा-अधूरा है। अव्यवस्था और भ्रष्टाचार की बदौलत सम्पूर्ण कोसी योजना सफेद हाथी बनकर रह गई है। जो योजना बिहार के लिए जीवनदायनी हो सकती थी, वह बोझ बन गई है। अनवरत बरती जा रही लापरवाहियों ने कोसी को एक बार फिर से अभिशाप बना दिया है। जो थोड़ी-बहुत खुशियाली इस इलाके में आई थी, सबों पर पानी फिर गया। वर्षों की बनी बनायी सारी आधारभूत संरचना एक बारगी ही ध्वस्त हो गई। हम वहाँ पहुँच गये, जहाँ लगभग छः दशक पहले थे।

मेरी स्पष्ट समझ है कि जलप्रलय 2008 राज्य सरकार के साथ-साथ केन्द्र सरकार के तटबंध के रख-रखाव के प्रति की जा रही अनवरत उपेक्षाओं का परिणाम है। तटबंध सुरक्षा जैसे अतिसंवेदनशील मामले को रूटीन कार्यो की तरह निहायत ही हल्के ढंग से लेना घोर आपराधिक लापरवाही है। तटबंध सुरक्षा की तरह बचाव कार्य में भी आपराधिक शिथिलता बरती गई। तटबंध टूटने के लगभग एक सप्ताह बाद बिहार सरकार को एहसास हुआ कि 'जान है तो जहान है'। 10 दिनों बाद केन्द्रीय सरकार की तन्द्रा भंग हुई। बिहार के प्रभावशाली केन्द्रीय मंत्री के दबाव फलस्वरूप 28 अगस्त 2008 को प्रधानमंत्री दौरा के बाद राष्ट्रीय आपदा घोषित किया गया। तबतक मधेपुरा, अररिया, सुपौल, सहरसा और पूर्णियां जिले के 31 प्रखण्डों की 331पंचायतों के 866 गाँव जलमग्न हो चुके थे। लगभग 30 लाख आबादी पूरी तरह प्रभावित हुई। जिसमें मधेपुरा जिला की सर्वाधिक लगभग 11 लाख की आबादी है। सरकार द्वारा लोगों को सुरक्षित स्थानों पर ले जाने के लिए कहा जा रहा था, लेकिन कहाँ जाना है, कोई निश्चित ठौर-ठिकाना नहीं। केले के थम और अनाज रखने वाले ड्रामों के सहारे लोग अपनी जान की कीमत पर पानी से निकल रहे थे और भूखे-प्यासे बदहवास जान बचाने हेतु भागे जा रहे थे। पानी में नाविकों ने लूटा और सूखे में मैक्सी-टेक्सी वालों ने लुटना शुरू किया। लेकिन इस बीच स्वंयसेवी संस्थओं और आमलोगों ने जगह-जगह भोजन एवं ठहरने का इन्तजाम करके मानवता की लाज रखी। सेना के कमान सम्हालते ही बड़ी संख्या में प्रभावित लोगों को मौत के भँवर से निकाला गया। इस दरम्यान निरीह समझे जाने वाले लोगों के अदम्य साहस और जिजीविषा भी काबिले गौर है, जिसकी बदौलत लोगों ने अथाह जलराशि के बीच अपने को जिन्दा रखा। निहायत ही भीतरी क्षेत्र के लोगों से मिलने पर जो आप बीती सुनी, रौंगटे खड़े कर देने वाली थी। बिहार सरकार के आपदा प्रबन्धन की कार्यवाही तो हैरत-अंगेज थी। जब वास्तविक रूप में

आपदा आई तो प्रबंधन की धज्जियाँ उड़ गई। बहरहाल यह कहानी काफी लम्बी है, जिसकी चर्चा फिर कभी। एक आकलन के अनुसार लगभग 50 हजार की आबादी लापता है, जिसमें एक चौथाई तो निश्चित रूप से अपनी जीवन लीला समाप्त कर चुकी है।

कोसी तटबंध निर्माण के लगभग साढ़े चार दशक बीत गये हैं। इसकी फूल-फ्रूप सुरक्षा हेतु विगत के अनुभवों के आधार पर ठोस उपाय की अविलम्ब दरकार है। उत्तर बिहार की सम्पूर्ण आबादी इसके प्रभाव क्षेत्र में आती है। यह महज अरबों राशि की बर्वादी नहीं बल्कि सभ्य समाज के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह है। हमारी तमाम सोच-समझ एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों पर सवाल उत्पन्न करता है। इस दिशा में कुछ महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ-

-कोसी योजना के प्रारूप को सम्पूर्णता में लागू करना है। खासकर हाईडैम का निर्माण अति आवश्यक है।

-जल-प्रलय से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में प्रभावित सबों को खेती, फसल आवास, पशु समेत सभी बर्वादियो का सहानुभूतिपूर्वक समुचित मुआवजा दिया जाय।

-प्रभावित क्षेत्र की आधारभूत संरचनाओं को अविलम्ब दुरूस्त किया जाय। सर्वाधिक प्रभावित मधेपुरा जिला पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है।

-तटबंध टूटने के कारणों का पता लगाने हेतु केन्द्र सरकार द्वारा न्यायिक आयोग का गठन हो। जो बिन्दु-मूलक हो, यानि 2007 के बरसात के बाद से तटबंध मरम्मति के लिए की जा रही कार्यवाहियों की गहराई से समय सीमा के अन्दर जांच हो, साथ ही दोषी लोगों की स्पष्ट रूप से पहचान हो।

-कोसी जल प्रलय 2008 का प्रमुख कारणों में तीन सरकारों (भारत, बिहार, नेपाल) के बीच समन्वय का घोर अभाव देखने को मिला है।। अतः भारत और नेपाल सरकार द्वारा संयुक्त रूप से कोसी नदी जल आयोग का गठन करें, जिसका सह-अध्यक्ष दोनों देशों के प्रधानमंत्री हों।

-राष्ट्रीय स्तर पर भी एक आयोग या समिति का गठन हो, जिसका अध्यक्ष प्रधानमंत्री और कार्यकारी अध्यक्ष, बिहार का मुख्यमंत्री हो, जिसमें राज्य एवं केन्द्र सरकार के जलसंसाधन मंत्रालय के मंत्री, सचिव एवं कोसी बाढ़ विशेषज्ञ भी हो, जिसकी वर्ष में दो बैठक अवश्य हो। एक बरसात से पहले (फरवरी -मार्च) और दूसरी बरसात के बाद (अक्टूबर-नवम्बर) यानि प्रस्तावित वर्ष के बरसात से पहले राष्ट्र को तटबंध सुरक्षा की पूर्ण गारंटी दी जा सके।

बिहार सरकार के स्तर पर भी मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में अधिकार सम्पन्न कोसी क्षेत्रीय प्राधिकार का गठन हो। इस प्राधिकार को तटबंध सुरक्षा संबंधी बजट बनाने और खर्च करने का अधिकार हो, साथ ही तटबंध के रख-रखाव में इंजीनियरों एव सम्बधित पदाधिकारियों की पदस्थापना की पूर्णतः जबावदेही हो। जल संसाधन मंत्रालय के सभी इंजीनियरों एवं कर्मचारियों को आपदा प्रबंधन के व्यावहारिक प्रशिक्षण की व्यवस्था अनिवार्य रूप से हो ताकि समय आने पर इनकी बुद्धि काम कर सके। बचाव राहत और पुनर्वास जैसे सारे कार्य इन्हीं राज्य कर्मचारियों के सहारे चलाये जाते हैं और वे इन्हें सरकारी दफ्तरों की तरह चलाते है।

अतः सिर्फ सरकार के भरोसे कोसी और तटंबधों को नहीं छोड़ा जा सकता, न सिर्फ तटबंध निर्माण बल्कि सुरक्षा के प्रति भी कोसी वासियों को सचेत होना होगा। इसके लिए जरूरत है व्यवाहिरक कदम उठाने की साथ ही एक ऐसे संगठन की जो जनसहयोग जुटा सके और इस दिशा में अग्रसर हो।

(लेखक सामाजिक कार्यकर्त्ता एवं समाजशास्त्र के प्रध्यापक हैं।)

कोसी ने बदला नक्शा

अनिल कुमार यादव

बिहार का शोक कही जाने वाली कोसी नदी ने प्रलयकारी बाढ़ के बाद क्षेत्र का नक्शा ही बदल दिया है। इस बदले नक्शे को लोग लम्बे समय तक याद करेंगे। स्थितियों के मद्देनजर हम यह भी कह सकते हैं कि कोसी ने किताबों सें निकलकर भूगोल को बदला है। बाढ़ बिपदा का ऑकलन यदि अकेले मधेपुरा जिले का कर लें तो अन्य जिलों में तबाही की स्थिति एक हद तक स्वत: साफ हो जाती है। प्रशासनिक आँकड़ों के मुताबिक बाढ़ से प्रभावित प्रखंडों की संख्या गयारह तथा प्रभावित पंचायतों की संख्या 130 है। प्रभावित जनसंख्या लगभग 11. 55 लाख है। इसके साथ ही लगभग 1.16 लाख हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि भी बाढ़ से प्रभावित हुई है। मृतकों की संख्या प्रशासन एक सैकड़ा पार बताता है। सरकारी दावे अपनी जगह है, लेकिन पड़ताल के बाद स्थितियां कुछ और ही सामने आती हैं। बाढ़ के दौरान यदि व्यक्तियों की हुई मौतों पर नजर डालें तो अकेले उदाकिशुनगंज प्रखंड में चालीस से भी ज्यादा मौतें हुई हैं। इससे संबंधित पीड़ितों ने प्रखंड अधिकारियों के पास दावा भी प्रस्तुत किया है। हालांकि प्रलयकारी बाढ़ के बाद प्रभावित क्षेत्रों में प्रशासनिक दावों के अनुसार 110 मोटरबोट 418 निजी नावों का संचालन किया गया। 90 सहाय कैम्प संचालित किए गए।

इसके बावजूद अब यदि हम मौजूदा हालात पर दृष्टि डालें तो कोसी के द्वारा बदला गया नक्शा कैसे पूर्व की स्थिति में दुरुस्त होगा, यह एक बड़ा सवाल उभर कर सामने आता है। ज्ञातव्य हो कि मधेपुरा के कुमारखंड में 20 अगस्त 2008 को पानी प्रवेश किया और जिला मुख्यालय समेत ग्यारह प्रखंडों में फैल गया। इसके बाद आलम यह हुआ कि हजारों की संख्या में मकान क्षतिग्रस्त हो गए। कितने पानी में भी बह गए। एन. एच. 106 और 107 तो एक दर्जन से भी अधिक स्थानों पर कट गए। इन्हें अभी भी ठीक करने की कवायद जारी है। स्थिति ऐसी उपजी कि पटसन, गन्ना और आलू की खेती भी बुरी तरह प्रभावित हो गई। और इस तरह कोसी त्रासदी ने कोसी अंचल का भूगोल हीं नहीं बल्कि सामाजिक नक्शा ही बदल डाला। *(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।)*

कुसहा टूट की 'केमस्ट्री'

डा. महेन्द्र

जून महीना दैनिक जागरण पेपर का मुख्य पृष्ठ। खबर छपी अगर राज्य की नदी का बाँध टूटा तो अफसर नपेंगे। लेकिन हुआ क्या? अंततः कोसी तटबंध कुसहा में टूट गया। न अफसर नपे और न ही सरकार जिम्मेदारी ली। दोषारोपन हुआ तो सिर्फ कोसी नदी पर। कोसी ने अपना प्रवाह मार्ग बदल लिया है। क्या यही सच है कि कोसी अपना प्रवाह मार्ग बदल लिया है? तो जवाब है कि नहीं!

कोसी नदी को बिहार का शोक कहा जाता था। 1965 ई. में कोसी नदी पर बाँध बना कर उसे एक सीमित क्षेत्र में बहने के लिए छोड़ दिया गया। यह सही है कि कोसी अपनी प्रवाह मार्ग बदलती है। इसी बदलती प्रवाह मार्ग को रोकने के लिये तो कोसी नदी पर बाँध बना। सिंचाई के लिये नहरें निकाली गई। नहर बन जाने के कारण इस क्षेत्र में सिंचाई व्यवस्था उन्नत हो गई। लोगों का विकास होने लगा। हलाँकि सरकारी उदासीनता के कारण कोसी इस बीच कई बार तटबंध को तोड़ा और इस क्षेत्र के लोगो के विकास को अवरुद्ध किया।

इस बार 18 अगस्त 2008 को जो कुसहा में तटबंध टूटा वह पहले के टूट से अलग हटकर है। इसमें भयंकर तबाही हुई। लगभग 50 हजार लोग कालकवलित हुये। लाखों पशु मरे, करोड़ो की फसल बर्वाद हुई और एक बार फिर से कोसी नदी बिहार का शोक हो गया। कोसी नदी इस बार जो अपना प्रवाह मार्ग बनाया वह अकल्पनीय था। इस इलाके के लोग भूल गये थे कि अब इस क्षेत्र में कोसी अपना प्रवाह मार्ग बनायेगा। और भूलना भी स्वाभाविक था, क्योंकि कोसी नदी पर करोड़ों रुपया खर्च कर बाँध जो बना दिया गया था। बाँध की देखभाल के लिये नेपाल और भारत दोनों जगह अफसर बहाल हुये। मॉनेटरिग व्यवस्था कायम की गई और उस व्यवस्था पर करोड़ो खर्च होने लगे।

18 अगस्त 2008 को जब तटबंध टूटा तो सरकार और सरकारी अफसरों ने जिस तरह की उदासीनता दिखाई उससे तो लगा कि इस तटबंध की सुरक्षा की जिम्मेदारी न तो सरकार की है और न ही सरकारी अफसर इनकी सुरक्षा में नियुक्त है। सरकारी उदासीनता कितनी रही कि 17 अगस्त तक जिस तटबंध को सुरक्षित बताया जा रहा है, 18 अगस्त को टूट जाता है। और वह भी 1.25 लाख क्यूसेक पानी में। 1991 में 9 लाख क्यूसेक पानी में भी यह तटबंध नहीं टूटा। मसलन इस तटबध की क्षमता 9 लाख क्यूसेक पानी तक था। दबी जुवान में तो यहाँ तक कहा जा रहा है कि विभागीय मंत्री और अफसरों ने कोसी में महासेतू पुल बनाने वाली कम्पनी से करोड़ो रुपये लिये और उन्हें आश्वासन दिया गया कि आप तेजी से काम करें, पानी को बराज के पहले रोक कर रखा जायेगा। और यह सच भी प्रतीत होता है। क्योंकि जब तटबंध टूटा तो कोसी बराज का लगभग सभी फाटक नीचे गिरा हुआ था। मंत्री और अफसर यह भूल गये थे कि कोसी नदी विश्व में सबसे अधिक सिल्ट (गाद) लाने वाली नदी है। पानी आगे नहीं बढ़ेगा तो गाद भी आगे नहीं बढ़ेगा। और हुआ भी वही। सिल्ट कुसहा से लेकर कोसी बराज तक काफी मात्रा में जमा हो गया। परिणाम सबके सामने है। खबर यह भी है कि 'कैटगरी-ए-रिश्क' घोषित होने पर तीनों पाली में 24 घंटे बचाव कार्य किया जाता है, वह तेल के अभाव में नहीं हुआ।

काठमाण्डू में तैनात समन्वय अधिकारी छुट्टी पर थे। कोसी परियोजना के कार्यालय का टेलीफोन काम नहीं कर रहा था, क्योंकि टेलीफोन बिल नहीं भरा गया था। बिहार सरकार के जलसंसाधन विभाग द्वारा जारी वुलेटिन में 17 अगस्त तक तटबंधों ठीक-ठाक बताया गया। तटबंध टूटने के पाँच या छः दिनों बाद राज्य के महाधिपति जनता को दिलासा देने सामने आते हैं यह सब महज संयोग कैसे हो सकता है। इन सब तथ्यों का केमेस्ट्री है, जिसे हमें समझना होगा। मोटा-मोटी हम जैसे आम आदमी को सत्ता का जो केमेस्ट्री समझ में आता है वह यह है कि 1984 में 78 कि. मी. पूर्वी तटबंध पर कटाव तेज होने पर मरम्मत के लिए 3 सितम्बर को 51 लाख रुपये का भुगतान ठेकेदारों को किया गया था। 5 सितम्बर को तटबंध टूट गया और मरम्मत में 8 करोड़ रुपये खर्च हुए। कुसहा में यदि बांध का मरम्मत होता तो अधिक से अधिक 50 लाख खर्च होते और अब राज्य सरकार ने तटबंध की मरम्मत के लिये 197 करोड़ रुपये स्वीकृत किये हैं। आप भी समझियें नहीं तो कोई लाल बुझक्कर आकर कह जायेगा कि 'लाल बुझक्कर बुझ गया और न बुझा कोए, पैर में चक्की बांधकर हिरणा कूदा होए'।

(लेखक इतिहास के अनुसंधानकर्त्ता हैं।)

बिखरी कोसी बिखरा बिहार

अरविंद पाण्डेय

कोसी तो करती थी पुकार
बांधे कोई, दे उसे प्यार
पर कहीं, किसी ने नहीं गुना
कोसी का क्रन्दन नहीं सुना
नौकरशाहों का था निर्णय
हो सशान्ति या फिर मचे प्रलय
मजदूरी नहीं बढ़ाएंगे
जन में जल-प्रलय मचाएंगे
खण्डित कुशहा तटबन्ध हुआ
कोसी का क्रोध प्रचण्ड हुआ
कहने को है मजबूत तन्त्र
कोई कुछ करने को स्वतन्त्र
व्याकुल कोसी है दौड़ रही
रुकने का ठौर तलाश रही
घर द्वार बहा, परिवार बहा
सपनों का भी संसार बहा
कंधे पर बकरी को डाले
बच्चे को लटका लिया गले
गिरते को फिर लिया थाम
पूछा ना मजहब, जाति, नाम
अपराध करे जो, बचा रहे
व्यभिचार करे जो, बचा रहे
उन्मत्त हंसी नौकरशाही।
गल कर बह गयी लोकशाही।

(लेखक कवि, गायक तथा भारतीय पुलिस सेवा के वरिष्ठ अधिकारी हैं।)

कोसी, मुर्गी और दड़बा

डा. शांति यादव

बांध के बंधुआ
कोसी, मुर्गी और दड़बा...
मुनर मरड़ बकर-बकर करते घूमते रहते हैं
लोग-बाग अब उनका 'एक स्क्रू ढीला' मानकर चलते हैं
बस इसी अगस्त से
जबसे 'कुशहा बांध' टूटा और
'कुशहा' कुश की तरह दुनियाँ भर को
आँख से पांव तक चुभने लगा
पर मुनर मरड़ को हल्केपन से लिया जा सकता है क्या?
जरा सा छेड़ने पर बोलते चले जाते हैं मुनर मरड़-
कोसी-सोने के अंडे देने वाली मुर्गी
जो दड़बे में बैठकर कभी अंडे नहीं देती
हर साल अपने दड़बे से निकल भागती है
आगे- आगे मुर्गी
पीछे- पीछे सरकार की पूरी पलटन
चह्- चह्- चह्
उंगलियों को जोड़कर उसे पुचकारते
उसके पीछे- पीछे ...
कोसी हमारे बाग-बगीचे
खेत - खलिहान
माल- मवेशी
घर- दुआर
सब चुग जाती
चोंच से, पंजों से उखाड़
तितर- बितर कर देती
पर सोने के अंडे देती जाती
सरकार की पूरी पलटन
उन अंडो के लिए मारामारी करती
एक - दूसरे को धकियाती
लाठी- डंडा सब चल जाता

और हम बांध के बंधुआ
अपनी उजड़ी फसलें
डूबे बाग - बगीचे
दहे-बसे घर-दुआर को देखते छाती पीटते
जब हम पागलों की तरह उन्हें घूर रहे होते
और उन्हें असह्य हो जाता
तो वे अंडे के भीतर का सोना निकाल
हम पर छिलके फेंकते/और
अखबारों में फोटो छपाते
कोसी सबको चराती
महीने-दो महीने पीछे भगाती
और फिर लौट आती-
आराम से/
उसे फिर से दड़बे में बंद कर
पूरा महकमा झटपट अपना- अपना दरवाजा भिड़ाता
और
अपने हिस्से आये सोने के अंडों का हिसाब करता
साल दर साल...
मगर इस बार तो मुर्गी मचल गई
सातो बहनों ने जोर लगया
दड़बे को उखाड़ फेंका
अब तो चारो तरफ मुर्गियां और अंडे ही अंडे
मुर्गी फसल डुबोती तो अंडे देती
घर ढाहती तो अंडे देती
पुल तोड़ती अंडे देती
सड़क बहा ले जाती तो अंडे देती
पटरियां झुलाती तो अंडे देती
और
मानुष मारती तो अंडे देती
लोग-बाग हैरान-परेशान
बिल में पानी घुस आए सांपों की तरह बिलबिलाते
बाज के पंजे में बेबस चिड़िया की तरह चिंचियाते
घायल हाथी की तरह कराहते
लूटे गए राहगीर की तरह पछताते
उधर मुर्गी पकड़ने का अभियान जोरों पर
राशन, पानी, दबा-दारु
नाव, हेलीकॉप्टर सब लेकर

`मुर्गी के पीछे-पीछे
चह्- चह्- चह् ...
सरकार से स्वेच्छिक संगठन तक
दस्त से वक्ति तक
देशी से विदेशी तक
मुर्गी को दड़बे में डालना जरूरी है
बांध के भीतर जो बंधुए हैं
मुर्गी उनकी मजबूरी है
महकमा लहालोट है
मुर्गी पकड़ने का ठेका दे दिया गया है
राज्य नहीं तो केंद्र
और केन्द्र नहीं तो विश्व बैंक
खर्चा उठाएगा
हमारी झोली में अंडे के छिलके हैं
हम उन्हें मुठ्ठियों में भर-भर
चूरम चूड़ कर रहे हैं।

(लेखिका कवियत्री तथा वर्त्तमान में उच्चविद्यालय की प्राचार्या हैं।

गजल

विनय कुमार चौधरी

यक-ब-यक आपदा आन पहुँची,
हम मुसीबत के मारे हुए है;
मेरी माँ कोशिका! हद से ज्यादा,
कोप भाजन तुम्हारे हुए हैं;
उनकी पहचान तक मिट गई है,
लाश बन जो किनारे हुए हैं;
अपनी-अपनी खुराकी की खातिर,
ये जमा गीध सारे हुए हैं;
ट्रक से सामान के साथ ही वे,
अपना बैनर उतारे हुए हैं;
उनको ही राहतें बाँटते, जो,
राजनीति के नारे हुए हैं;
हम तो मर के भी फिर जी गए हैं,
हौसले ही सहारे हुए हैं।

2.

बाढ़ में गाँव के गाँव घर बह गए,
सिर्फ फसलें नहीं, जानवर बह गए;
क्या बचाते भला माल-असबाब को,
गोद से जबकि खूने जिगर बह गए;
भीख का तो कटोरा पड़ा रह गया,
जो भटकते रहे दर-ब-दर बह गए;
भूख ही आदमी को चबाने लगी,
पेट की धार में लोग मर-बह गए;
जो भी राहत के सामान भेजे गए,
उनके हाथों इधर से उधर बह गए।

मैला आंचल में जल प्रलय

रामाज्ञा शशिधर

आजादी के ठीक बाद मैला आंचल के बावनदास पर भ्रष्टाचार से लदी पचास बैलगाड़ियां चढ़ा दी जाती हैं। इस बार उसके एक हजार गांवों की एक करोड़ संतानों पर पूरी हिमालयी गाड़ी ही दौड़ा दी जाती है। जल प्रलय से हजारों लोग काल के गाल में समा जाते हैं। लाखों जानवर, खेत-खलिहान, दलान, मचान जल तांडव के जबड़े में आ जाते हैं। भुक्खड़ों की सिर्फ टोलियां बचती हैं, न तो कोठार एवं बखार और न ही उनका मददगार नक्षत्र मलाकार। और तब! जब मैं काशी से कोसी यात्रा पर अपने छात्र निखिल के साथ निकलता हूं। चैनलों और अखबारों में कोसी का मंजर कहर ढा रहा है। शहर बनारस अनेक रूपों में प्रतिक्रियाएं व्यक्त कर रहा है। शिक्षक, छात्र, लेखक, पत्रकार, व्यापारी, दुकानदार सभी अपनी-अपनी तरह से प्रकृति और सत्ता को कोस रहे हैं। सभी राहत कार्य में साझेदार हैं। बीएचयू के छात्र, शिक्षक सहायता कोष जमा कर रहे हैं। मुहल्ला अस्सी का राहत कोष जमा हो गया है। ड्राफ्ट बन चुका है। पप्पू की दुकान पर भाजपाई ताल ठोंक रहे हैं कि ड्राफ्ट वाया बिहार भाजपा राहत कोष मुख्यमंत्री राहत कोष में जाएगा। पोई की दुकान पर धर्मनिरपेक्षतावादियों के पसीने छूट रहे हैं। उनका धर्मनिरपेक्ष चंदा कम्युनल हो गया है। वे राहत की झप्पटामार कथा से आहत हैं। कोई चंदा चित्र में एक टांग देखकर प्रसन्न है कोई आधा ललाट। अतिसंवेदनशील और असहाय गुरुओं ने कलियुग लीला पर चुप्पी साध ली है।

मुगलसराय से ही बाढ़ पीड़ित परिवारों का हुजूम दिखने लगता है। तबाह एवं त्रस्त परिजन पुरजन का हालचाल लेने बिहारी भैया जालंधर, फरीदाबाद, सूरत, दादर से लौट रहे हैं। हरेक की आंखों में खौफ है, हृदय में हाहाकार है। गहरी उदासी और चौकन्नी चुप्पी से आप भांप लीजिए कि यह कोसी क्षेत्र का ही होगा।

रात के बारह बजे होंगे। बोगी के पिछले हिस्से से पुलिसिया गालियों की तेज धूल आ रही है तेरी मां का एफ आई आर द्वारा बलात्कार करूंगा। हड़बड़ाकर उठता हूं। देखता हूं। एक पैसेंजर एक बड़ी गठरी लेकर चढ़ा है, बिहार जा रहा है। रेल पुलिस उसे पीट रही है। उसने चढ़ावा नहीं दिया है। मेरे छात्रों ने जाकर हस्तक्षेप किया तब शांति हुई है। मेरी नसों में क्रुद्ध लहर दौड़ रही है। भारत मां का बेटा, भारत मां का बिहारी रेलमंत्री, फिर भी तेरी मां का एफआईआर द्वारा बलात्कार। एफआईआर और बलात्कार दोनों पर्याय। भारत मां रो रही होगी जार जार।

मनीष ने बताया- गुरुजी जूते गायब हैं। निखिल ने थैला देखा- उसका पर्स और एटीएम कार्ड गायब। मैंने कुरते की जेब को ऐसे पकड़ा जैसे किसी ने दिल निकाल लिया हो। दिल के तेज धक्के से रुपए धड़क रहे थे। मैंने दोनों को ऐसे ढाढ़स बंधाया जैसे सरकार बाढ़पीड़ित के लिए करती है। बांध नहीं बंधाती, ढाढ़स बंधाती है।

रातभर नींद नहीं आ रही है। चौंककर बैठ जाता हूं। क्या यह बाढ़ पीड़ितों के लिए उफनती हुई बेचैनी है, जहरखुरानों, जेबकतरों, छिनैतों का डर है या ट्रेन पुलिस का आतंक? हावड़ा अमृतसर मेल ढाई बजे रात को

पटना पहुंचती है। हिन्दुस्तान, दैनिक जागरण, प्रभात खबर, आज, राष्ट्रीय सहारा, सन्मार्ग सभी अखबार जल प्रलय की तस्वीरों, सुर्खियों, रिलीफ कार्यों एवं नेताओं के आरोप-प्रतयारोप से भरे हैं।

जंक्शन पर बाढ़ राहत शिविर के बैनर अागे हैं जिसके आसपास रिलीफ वर्कर नहीं, पैसेंजर खलिहान की तरह एकत्र हैं। कोसी क्षेत्र से भागी हुई बाढ़ पीड़ितों की टोलियां विभिन्न प्लेटफार्मो पर ऐसे पसरी हुई हैं मानो डूबने वाले खेतों से छानी गई धान की बालियां, केले के घौड़, मरी हुई मछलियां या मकई-ज्वार के चारे हों। मेहायी हुई, धंगियाई हुई, लुटी-पिटी; ढही ढनमनाई हुई टोलियां। कहां जाना है? दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, सूरत, मुम्बई, पाकिस्तान, मुलतान, कब्रिस्तान कहीं भी। इस जहां के आगे जहां और भी हैं।

हम हाथीदह स्टेशन पर पांच बजे सुबह उतर गए हैं। यहां की गदरायी फेनियायी हुई गंगा मिथिला और मगध को बांटती है। गंगा का प्रचंड हमला ऐसा कि हाथी दह गया था। हाथीदह जीप स्टैंड में हम गठरी की तरह लाद दिए जाते हैं। गठरी-मोटे के साथ लदिए बरना भागिए। महिंद्रा जीप पर अंगिका लोकगीत बीच-बीच में लालू नीतीश का फिल्मी संवाद। जीप के भीतर, बाहर, आगे, पीछे, ऊपर नीचे हर जगह पैसेंजर। शीशे के आगे बोनट पर भी। निकली हुई कीलों में टंगे हुए थैले- पंजाबी थैला, हरियाणवी थैला, कलकतिया थैला, बंबइया थैला। खलासी जी टूटे नहीं, छूटे नहीं। कि हर थैला कलेजे से लगा लेने के काबिल है।

नेहरु युग के विकास प्रतीक राजेंद्र पुल की जर्जर सड़क से गुजरते हुए गंगा की जटाएं अनंत तक लहराती दिखती हैं। गंगा के जबड़े में अंतिम सांसें खींचती हुई खरीफ की सिर्फ गर्दन एवं चुटिया ही बाहर हैं। दोधारी तलवार की तरह बेगूसराय की विशाल आबादी वाले आबाद खेतों को इसने काट दिया है। मां ने बताया था कि जब तुम डेढ़ साल के थे तो गंगा की बाढ़ आंगन आकर समदन गाती थी। तुम द्वारे से पानी में कूद गए। डूब गए। किसी तरह बचाया हमने।

याद आते हैं विद्यापति- बड़ सुख सार पओल तुअ तीरे/ छाड़इत निकट नयन बहअ नीरे। गंगा किनारे राष्ट्रीय राजमार्ग पर दुखी बेरोजगार पीढ़ी फौज में भर्ती होने के लिए दौड़ का अभ्यास कर रही है। ऑल इंडिया परमिट के ट्रकों की रफ्तार से रफ्तार मिला रही है। थर्मल का धुआं बंद, यूरिया कारखाने की जर्जर काया समाप्त, गढ़यारा यार्ड से काजू, नमक, कोयले का पलटैया खत्म। दोनों तरफ दीवारों-छप्परों पर सी कंपनी और मुन्ना बजरंगी जैसी फिल्मों के पोस्टर हैं। खलासी सुनसान में रोककर धमकाता है- पहले पैसा निकालोअह तब गाड़ी बढ़तै।

रास्ते में बीहट। बिहार का मास्को। कभी यहां लाल सेना बनती थी। दर्जन से अधिक शहीद। बिहार इप्टा का प्राण। राजनीतिक चेतना की क्रांतिकारी प्रयोगशाला। कॉमरेड चंद्रशेखर चौक पर स्टील इंडिया कंपनी का तोरणद्वार। एमपी सूरजभान की तस्वीर। स्वास्थ्य शिविर का उद्घाटन इस्पात मंत्री करेंगे। सूरजभान उर्फ सूरज सिंह। आजीवन कारावास का सजायाफ्ता सांसद। दिनकर उर्फ सूरज उर्फ कामरेड सूर्यनारायण की धरती पर नया सूरज, दमकता हुआ। बिजली कारखाने से उड़ी हुई लाखों क्विंटल राख पर पूरब के क्षितिज को देखता हूं। सुबह का कोयलाया हुआ सूरज उग रहा है।

रिलीफ रेल आने वाली है। चारों ओर भीड़ की बाढ़। चीख, चिक्कार, शोर, दहशत। टीटी नहीं, पुलिस नहीं, कुली नहीं। रह-रहकर भोंपू बोलता है- रिलीफ रेल आ रही है। जो यात्री बाढ़ क्षेत्र से पश्चिम की ओर, पटना की ओर जाना चाहते हैं, बेटिकट यात्रा कर सकते हैं। पूछताछ काउंटर पर मैंने पूछा- और पूरब की ओर? रिलीफ रेल पूरब के लिए रात में आएगी। दूसरी ट्रेन से जाना है तो टिकट कटाइए। क्या बाढ़ पीड़ित और रिलीफ वर्कर रात तक इंतजार करेंगे? क्या एक ट्रेन में रेला अट पाएगा? एने-ओने चढ़ने से फाइन तऊ लगवे करेगा?

प्लेटफार्म पर मदारी का खेल चल रहा है। मेरे साथ चित्रकार साथी सीताराम हो गए हैं। मैंने कहा- देखिए लोकतंत्र का खेला। जवाब- मदारी नेता है। तमाशबीन वोटर है। समय-बेसमय पिटारी से कोसी का सांप निकाला जाता है। मनोरंजन जारी है। वोट दीजिए, पैसा दीजिए, रिलीफ लूटने दीजिए, बांध गटकने दीजिए, जान दीजिए पर खेल तो देखना ही पड़ेगा। मैं देखता हूं, मटिहानी के पूर्व विधायक राजेन्द्र राजन आ रहे हैं। बाढ़ क्षेत्र चलिए। किसी काम से दिल्ली जा रहा हूं। ठीक से कुशलक्षेम भी नहीं कि ट्रेन आ जाती है। हम लोग दौड़कर बोगी की ओर भागते हैं। रेल चल पड़ती है।

समस्तीपुर-सुपौल सवारी गाड़ी की बोगी में खचाखच भीड़। सभी बाढ़ पीड़ित। पीड़ित का परिवार। सभी अपनी, अपने परिवार की, गांव की, जिले-जवार की आत्मकथा बांच रहे हैं। हिम्मतपस्ती, किस्मतपस्ती की लकीरों से भरे हुए चेहरे। मानसी तक के सारे स्टेशनों पर राहत शिविर के बैनर। न रिलीफ वर्कर न पीड़ित। क्लबों, संगठनों, मंचों का प्रचार जारी है।

सूरदास जी भीड़ को चीरते हुए खंजड़ी बजा रहे हैं, भोले बाबा की नचारी सुना रहे हैं। पीड़ितों के बीच पीड़ित। भुक्खड़ों एवं भिखारी हो गए अपनों से भीख की उम्मीद। मैं सहयोग राशि देकर कहता हूं- भैया, बाढ़ पर कोई गीत है क्या? कोसी ने सब कुछ तबाह कर दिया और आप नचारी गा रहे हैं। बाबू दुःख बढ़ाने से भीख नहीं मिलती, घटाने से मिलती है सबका हृदय भरा है। लीजिए आप लोग सुन लीजिए-

बारह तारीख कअ अमनी टुटलै/ तेरह अमरपुरबांध/ कतैक गैया भैंसी डुबलै/ कतैक गेले जान/ भारी बिपतिया परलै/ उत्तर बिहार में/ मरुआ डुबलै, खेरही डुबलै/ डुबलै मकई धान/ भाग कअ मारल किसनमा रोबै/ अब नै बचतै जान/ लुंगी पिन्हकै ससुरालि गेलिए/ बचावैल अपन जान/ सुसररियो में पानी घुसलै/ कोना बचतै जान/ जहाज चढ़िकै नेता अइलै/ देखै कोसी पानि/ पंखी टूटि पतैला में गिरिलै/ गिरलै खेतबा धान।

मरुआ डूब गया। खेरही डूब गई। मकई, केला, धान डूब गए। किसान तबाह हो गए। उनका नसीब खराब है। अब जान कैसे बचेगी। इतनी गरीबी कि टी शर्ट जिंस कहां से आए। सो वह पतलून पहनकर ही ससुराल चला गया। लेकिन बाढ़ ने तो उसे भी नष्ट कर दिया। गुस्सा चरम पर है। नेता जी रेल या नाव से हालचाल लेने नहीं आ रहे हैं। वे हेलीकाप्टर से हवाई सर्वेक्षण कर रहे हैं, तबाही का तांडब देख रहे हैं, बाईस्कोप से बर्बादी निहार रहे हैं। पत्रकार हेलीकाप्टर से फोटू ले रहे हैं, आकाश से कैमरा चल रहा है। छत-छप्पर, बांस, बल्ली, कोरो मचान, लाश, घास, खटिया, बकरी, सबकी तस्वीर शूट हो रही है।

लांग शार्ट, मीडियम शार्ट, क्लोज अप, एक्सट्रीम क्लोज अप। चीख बिकेगी, साथ में नेता जी का बयान बिकेगा। इसीलिए पंखी टूटकर पाताल में गिर गई। धान के खेतों में बिखर गई। पंखी टूटने के कारण हेलीकाप्टर दुर्घटनाग्रस्त हो गया। संवेदना को बेचने वाले, नकली करुणा रखने वाले, लोकतंत्र के लोक से हवाई रिश्ता रखने वालों का तंत्र बर्बाद। कितना क्षोभ है इस गीत में। सूरदास गा रहा है-

कहां तोहर जिला भैया/कहां तोहर मकान/कौन कुल के बालक छिकहो/किए धरल छौ नाम/खगरिया हमर जिला भैया/भदास हमर मकान/नाई कुल के बालक हम छी/एल के हमर नाम/भारी विपतिया परलै/उत्तर बिहार में। एलके जी अपना फुल फार्म बताइए।

जी, लेलहू कुमार ठाकुर। भदास मेरा गांव है। खगड़िया जिले का हूं। अब सब लोग मुझे एलके ही कहते हैं। भदास गांव के लेलहू ठाकुर रेलगाड़ी में एलके हो गए हैं। वह अब न तो लेलहू यानी बताह यानी मतिमंद यानी मंदबुद्धि यानी गए गुजरे रहे और न ही पंचपनौनिया खौकार नाई।

वह रेल पर सवार होकर एलके नाउ हो गए। नाउ भी हिंदी वाला नहीं अंग्रेजी वाला। तबके लेलहू अब के एलके।

एलके उत्तेजित हो उठा है- कोसी मइया सब हिब रही हैं? हम भी हिब रहे हैं। नेताओं की करनी अच्छी नहीं है। तुम्हें कैसे दिखाई देती है लेलहू? सरकार, एलके कहिए, आप लोग रेल में भी गांव को नहीं छोड़ते हैं, हमारे हाथ में ही आंख है। देना चाहिए पांच का सिक्का तो निकालेंगे अठन्नी, कुरते की जगह सुन्नी। अच्छा हम चलते हैं लोटा देलै एक भोला, बेटा देलै चार।

खगड़िया के बाद मधेपुरा सुपौल की ओर ट्रेन चलती नहीं है, रुक-रुक कर सथानीय यात्रियों का इतंजार करती है। बनारस की फटफट सेवा या दिल्ली की ब्लू लाइन से सौ गुना ज्यादा इंतजार करने में माहिर। करुआ मोड़, धमारा आदि स्टेशनों पर गाड़ी ऐसे रुकती है जैसे रेलवे विश्राम गृह के थके-मांदे सफरी हों। दो मील दूर से दूध भरे केनों की कतार आ रही है ट्रेन में जितने यात्री उतने दूध भरे केन। करुआ मोड़ का पेड़ा, मिठाइयों में शेरा। यहां गार्ड की झंडे से गाड़ी नहीं चलती, पशुपालक किसानों के डंडे से चलती है। एक ने कहा, चलिए डराइबर जी, हो गया धन्यवाद।

ट्रेन चल रही है, खरड़ खरड़ खराम खराम। यात्रियों में ठन गयी है, बाढ़ पर घमासान। मधेपुरा के ग्वालपारा प्रखंड का एक परिवार खगड़िया में एक रिश्तेदार के यहां था। अब दूसरे रिश्तेदार के यहां भागलपुर जा रहा हैं। एक मर्द, दो औरतें, तीन बच्चे। एक महिला से रोटी का कौर नहीं उठ रहा है फफाकर रोने लगती है। सास-ससुर को घर में छोड़कर आए हैं। बकरी खूंटे में बंधी रह गई। मंगलसूत्र कोठी में बंद था मल्लाहों ने पैसे नहीं रहने पर जेवर ले लिये बूढ़े-बूढ़ी बीमार थे पूरा गांव बह गया। अनाज भी डूब गया होगा बखार गल गया होगा। सुग्गा पिंजरे में था। खाना मिलता होगा या नहीं। मोखे तक पानी आ गया था। बूढ़ा-बूढ़ी टस से मस नहीं हुए। तुम लोग जाओ, सामान रख आओ फिर आना। आंगन से लाशें बह रही हैं। बच्चे, बूढ़े, जवान। हमारे घर की बगल से पांच लाशें हाथ पकड़े हुए बह रही थीं। फिर रोने लगती है।

महिला के 'एजी' बताते हैं कि जलकुंभियों, ईख के खेतों, केले के बगीचों, बांस के झुरमुटों में गुच्छ के गुच्छ लाशें फंसी हुई हैं। मधेपुरा और सुपौल की सड़कें, गांव नक्शे से गायब हैं। नदी ने गांवों को उखाड़कर पुरानी राह पकड़ ली है। मजबूरन मछली खाने से लोग बीमार हो रहे हैं।

कितना त्रासद है कि नदी को आदमी, आदमी को नदी, मछली को आदमी, आदमी को मछली -सभी एक दूसरे को खा रहे हैं। बीमार हुए जा रहे हैं। पूरा जनतंत्र सड़ी लाशों के ढेर पर है। लाशों का लंच, लाशों का डिनर, लाशों का ब्रेकफास्ट।

ऊपर की बर्थ से आवाज आ रही है कि जलदस्यु खाली घरों को लूट रहे हैं। जो मनमानी किराया नहीं देता बीच नदी में उसे उठाकर फेंक दिया जाता है। परिवार को छोड़कर लड़कियों को नाव पर बैठा लिया जाता है। उनका बलात्कार हो रहा है। अंधेर है! यह राज ज्यादा दिन तक नहीं चल सकता। बगल की बर्थ बोलती है- मधेपुरा में गांव के बीच बांध काटने को लेकर लड़ाई ठन गई है डूब क्षेत्र वाले बांध काटना चाहते हैं, सुखाड़ वाले रोकना चाहते हैं। गोलीबारी चल रही है। लोग पानी, भूख और दवा से ही नहीं, गोली से भी मर रहे हैं। दूसरे वार्ड का कहना है कि यह कोसी का नहीं 'करप्सन' का कहर है। मधेपुरा के डीएम फरार हैं, एक मंत्री को जनता ने खूब पीटा है। ठेकेदारों के बीच बांध मरम्मत में कमीशन एवं काम को लेकर संघर्ष है। नेता अफसर को मनमाना कमीशन नहीं मिल रहा है बांध टूटा नहीं तोड़ा गया है।

जितने मुंह उतनी बातें। चारों ओर बातों का शोर। शोर के डब्बे में हम सब बंद हैं। यह देश शोर का एक डब्बा है जिसकी हम सब गूंज हैं। अर्थ में बदलना अभी बाकी है।

हाटे बाजार सहरसा पहुंचने वाली है। जहां-तहां रास्ते में हाट लगी है। जानवर बिक रहे हैं। गाय, भैंस, बछड़े, परुए, घोड़े, गदहे आदि। एक पीड़ित साथी बोलता है- हम लोगों ने बीस हजार का पशु दो हजार में बेच दिया। फेरहों के दिन लौट गए हैं। बख्तियारपुर पशु हाट में औने-पौने दाम में गाय मिल रही है। चलिए, पशु

डूबने से तो बचा। यात्रियों का मानना है पांच लाख से अधिक पशु डूबकर मर गए हैं। पचास हजार से ज्यादा लोग मरे हैं। घर के घर, गांव का गांव। गाड़ी सहरसा स्टेशन पहुंचती है। स्टेशन नहीं बाढ़ में उपलाए, दहे हुए लोगों का द्वीप। टापू पर दिन-रात शरण लिए हुए।

स्टेशन मुख्य द्वार के बाहर दोनों ओर शिविरों की भरमार। लालू भोजन शिविर, रामविलास राहत शिविर, रामदेव स्वास्थ्य शिविर, किसान मजूर मोर्चा रिलीफ शिविर, मारवाड़ी क्लब शिविर। अर्द्धनग्न, जर्जर, भूखे पीड़ित की लंबी कतार। पत्तल पर, कटोरे में, गिलास में, लोटे में छुरछुर खिचड़ी। खिचड़ी का पत्तल भोज। पत्रकारों, नेताओं के पदचापों, भाव-भंगिमाओं की रिलीफ वर्करों द्वारा झटपट पहचान। रामदेव शिविर में बाल कंकाल को लिए मांओं की लंबी कतार। पचास ग्राम दूध चार बिस्कुट लिए हाथ भुक्खड़ों की ओर, चेहरे एवं आंखें कैमरे की ओर। खट खट। दैनिक जागरण। स्ने स्ने। हिन्दुस्तान। भूखि और भीख का मर्मांतक चित्र पूरा देश देख रहा है।

हमलोग डीबी रोड के प्रमंडलीय खादी ग्रामोद्योग भंडार पहुंचते हैं। एक बड़े हाल में सामान पटक देते। लोकेंद्र भारतीय से भेंट होती है। देश भर से हर मिनट फोन आ रहा है। मैं सहयोग करना चाह रहा हूं। मेरे संगठन का रिलीफ जा रहा है। एम्स के पांच डाक्टर पहुंच गए होंगे जेएनयू से लड़के जा रहे हैं। बाहर चिउरा गुड़, मोमबत्ती, दाल, चावल, सलाई आदि की पैकेजिंग चल रही है। खादी भंडार के साथ उसके जिलों के लोग एवं संगठन सक्रिय हैं। लोकेन्द्र पसीना पोछते हुए बताते हैं, इसी कमरे में मेधा पाटेकर दीदी और पुष्पराज ठहरे हुए थे फिर आने वाले हैं। आप कितने लोग हैं? पुष्पराज ने बताया था। यहीं ठहरिए।

हम लोग बाढ़ राहत शिविर का चक्कर देर रात तक लगा रहे हैं। स्थानीय लोग सहयोग के लिए तत्पर हैं। सहरसा शहर की आबादी एक लाख है। सुपौल, मधेपुरा, अररिया के तीन लाख विस्थापित बाढ़ पीड़ित आ गए हैं। पहले दिन का नजारा गजब था। हर घर में आटा गुंथ रहा है, रोटियां सिंक रही हैं, पीड़ित मेहमान बने हुए हैं। शहर के मंदिर, मस्जिद, गिरिजाघर, गुरुद्वारा, स्कूल, कॉलेज, दफ्तर, मैदान, सड़क बाढ़ पीड़ितों से खचाखच हैं। जनता, छोटे संगठन और सेना के सहयोग की हर कोई तारीफ कर रहा है। दूसरी ओर सरकार एवं राजनीतिक पार्टियों के नजारे उतने ही अटपटे, बेढ़ब, फूहड़ और विवादित हैं।

यह है महादलित राहत शिविर । भारत सरकार के इस्पात मंत्रालय का पैसा है। सामग्री है। लेकिन लोजपा के झंडे और डंडे का बोलबाला है। सीताराम जी कौतूहलवश पूछते हैं कि बाढ़ पीड़ित कहां हैं? अभी घूमने गए हैं, भोजन के वक्त दिन और रात में आ जाते हैं। दस हजार की भीड़ होती है। दाल देखिए, भात देखिए, सब्जी जरा चख लीजिए। मंत्री जी ने पांच अधिकारियों को गड़बड़ सामान खरीदने के कारण सस्पेंड कर दिया है। बिहार के साथ केंद्र ने हमेशा सौतेला व्यवहार किया। डैम ने हमें बर्बाद कर दिया। सुपौल से कटिहार तक हजारों एकड़ जमीन में रिसाव का पानी जमा होने से कोई फसल नहीं होती है। मलेरिया, कालाजार की उपज का कारण रिसाव जल ही है। यहां का मीठा जल बेचकर मालामाल हुआ जा सकता है। हमारी सरकार आएगी तो हम बांध भी बनाएंगे और पानी भी बेचेंगे।

और यह है सेवाभारती राहत शिविर। यह संघ परिवार का शिविर है। उच्च विद्यालय का प्रांगण। चार हजार बाढ़ पीड़ितों से भरा परिवेश। शाम का वक्त! मैं बाढ़ पीड़ित कमरों की ओर बढ़ना चाहता हूं। कुछ निक्करधारी मुझे घेर लेते हैं- कहां से आप आए हैं? उधर कहां जा रहा हैं? क्या बात है? मैं किसी ज्यादा तबाह पीड़ित से बातचीत करना चाहता हूं। निक्करधारी मुझे एक मोटे-ताजे कुर्ता-धोती धारी बुजुर्ग के पास ले जाते हैं। इनसे मिलिए। ये हमारे नेता हैं। मैं दंग, अवाक्। क्या सबसे ज्यादा पीड़ित इस शिविर में ये सज्जन ही हैं?

स्वयंसेवक जी शुरू हो जाते हैं। फर्राटेदार हिंदी के बीच संस्कृत की छौंक। बीच-बीच में कनखी ऐसे मारते हैं जैसे हमसे प्यार हो गया हो।

बाढ़ पीड़ितों का यह सबसे पुराना शिविर है। यहां हिंदू भी हैं, मुसलमान भी हैं। मीडिया से हम दूर रहते हैं। हमें सेवा में विश्वास है। हर पार्टी वाला पैसा मंत्रालय से ला रहा है लेकिन चुनाव प्रचार अपना कर रहा है। हम इस बात के विरोधी हैं। यहां रोजा-इफ्तार सब जारी है। दो मुसलमान औरतों को बच्चे हुए हैं। इंडिया टुडे ने फोटो मांगा है। पांचजन्य में खबर आ रही है। क्या देखिए, इस तरह मत बोलिए आप भी पत्रकार हैं क्या चेहरा-मोहरा तो ऐसा ही लग रहा है। देखिए इधर, भारत माता की पूजा हो रही है, फिल्म चल रही है। बाढ़ पीड़ित थक गए हैं। मनोरंजन जरूरी है।

हम लोग नजारे निहारते हैं। भारत माता की विशाल तस्वीर का संध्या वंदन चल रहा है। बाढ़ पीड़ितों ने पैंतीस रुपए से आरती ली है। नेता जी कल मोतीचूर का दाना खरीद कर लाएंगे। विद्यापति पर फिल्म चल रही है धार्मिक गीत हो रहे हैं।

निखिल नेता जी पर प्रश्न दागता है कि बिहार में आपकी सरकार है। आप क्या कर रहे हैं? जवाब है, हमारा सहयोग है लेकिन पूरी सरकार नहीं। हमारे बाढ़ पीड़ित असली हैं लोजपा वालों के नकली हैं। उनके पास बाढ़ पीड़ित नहीं जा रहे हैं। केवल भोजन के समय लोग मिलेंगे वे खास समुदाय के लोग हैं जो आस-पास के गांवों से ज्योनार करने आते हैं। मीडिया वाले भी बिके हुए हैं।

चारों ओर घोर चर्चा है कि मंत्री, सांसद, विधायक रिलीफ फंड के नाम पर चुनाव फंड जमा कर रहे हैं। अगली रबी के वक्त उन्हें तीसरी फसल काटनी है। चुनाव की फसल। चर्चा यह भी है कि जनता ही नहीं रहेगी तो वोट डालेगा कौन?

पार्टियों के राजनीतिक शिविरों में मेन्यू पर बहस चल रही है। बाढ़ पीड़ितों का स्वाद बदलने के लिए, लुभाने के लिए खिचड़ी के साथ पापड़ आचार; भात दाल के साथ मिक्स सब्जी; कचौरी के साथ आलूदम। मेन्यू कार्ड बनाम वोट कार्ड का खेल चरम पर है। लोकतंत्र भूख और भीख की गली से गुजर कर विकसित भारत बना रहा है।

सैकड़ों गांव बिहार के नक्शे से गायब हो गए। सोनवर्षा राज की सासौल पंचायत बची हुई है। वह पानी में बसती है, पानी खाती है, पानी पीती है, पानी पर सोती है, पानी से मरती है। पानी वहां अनंत आकाश बना रहा है। हम सहरसा खादी ग्रामोद्योग भंडार से एक दर्जन रिलीफ वर्करों, डाक्टरों एवं रिलीफ सामग्री के साथ पचास किलोमीटर दूर मधेपुरा की ओर यात्रा शुरू करते हैं।

दोनों ओर डूबे हुए गांव। राष्ट्रीय राजमार्ग पर दो फीट पानी दौड़ रहा है, कूद रहा है, उछल रहा है। जीप ड्राइवर हिम्मती है। गाड़ी चलती नहीं रेंगती है, कभी धारा से धकियायी जाने लगती है। सोनवर्षा प्रखंड का कार्यालय जलमग्न है। बीडीओ साहब छत पर बैठकर कार्यालय चला रहे हैं। घपले के कागजात सबसे पहले गलते हैं, दूसरी फाइलें बाद में। दोनों ओर फूस के घर। बांस का टाट जैसे चरखाने वाली साड़ियां हों। धारा में चौकी लगाकर कपड़ा धोबन कार्य चल रहा है। बच्चे वंशी से मछली मार रहे हैं।

यह मैनापुल घाट है। जेनरेटर से चलने वाली सरकारी नाव पर लगभग सौ लोग सवार। बीस रिलीफ वर्कर यानी बाढ़ पीड़ित। सभी घर लौट रहे हैं। जलदस्यु का डर सता रहा है। नाव पर पुरुष, औरतें, बच्चे, गठरी, साइकिल, छाता, लाठी, बकरी सब लद गए हैं। सुरसा नदी की छाती चीरकर दस किलोमीटर जाना है।

प्रचंड धूप। दशरथ मंडल के बिना क्लिप के एक छाते के नीचे सात गर्दनें। क्लिप के बदले माचिस की तीली लग गई है। छाता तन गया है। बगल में एक मास्टर झा जी हैं। घर लौट रहे हैं। पत्नी साथ में। पान लगा रही है। कत्था डाल रही है। पनबट्टी सजाती है। पान घुलाते हुए छाता हथियाने पर उनकी नजर है। सरकार

खिचड़ी बांट रही है और इसे राइस जूस बोल रही है। क्या कीजिएगा। लाश, मूस, मवेशी, मछली, सांप सब साथ चल रहे हैं। देखिए, सुरसरि नदी है, काली कोसी के मिलने से पानी काला हो गया है। कोयले की तरह। हम लोग ससुराल में थे। मछली लेकर गांव जा रहे हैं। रोहू है। एक सौ बीस रुपए सेर। सिनेमा वाले सिनेमा बनाए तो खूब चलेगा।

सुना है हीरो सब भी मुंबई में रिलीफ जुटा रहे हैं। रिलीफ नाम की फिल्म बन जाएगी। जैसे चुनाव नाम की फिल्म दिखने वाली है। धीरे-धीरे छाता की छांव झा जी के सर पर है और डंडा दशरथ मंडल की मुट्ठियों में। सर, आप इधर घसक जाइए।

दोनों ओर गांव के गले तक पानी है। एक हरे पेड़ के ऊपर खंभा बंधा है। उस खंभे पर से कोयल जल विस्तार को चुपचाप निहार रही है। हनुमान मंदिर के डंडे डूब गए हैं। सिर्फ लाल झंडे दिख रहे हैं। एक मचान पर बकरी कुत्ता आदमी बैठे हैं। एक नाव पर महिलाएं चूल्हा सुलगा रही हैं। बंद जीप का आधा हिस्सा उगा हुआ है। नाव चल रही है। रह-रहकर सूंस उलटती है। यहां पानी बहुत गहरा है। बादल के पीले उपले टुकड़े नदी में बोल्डर की तरह दिख रहे हैं।

एकाएक नाव बंद हो जाती है। घर की टक्कर से पीछे भागने लगती है हिलिए मत! उठिए मत! डूब जाइएगा। सबका चेहरा फक्क! मोबाइल से एक नाव दूसरी नाव से बतियाती है। बेरिंग टूट गई है। लंगर गिर रहा है। लौटती नाव सट रही है। सीताराम जी सुझाते हैं कि गमछे को लाइफ सेवर बनाया जा सकता है। हाथ-पांव की उंगलियों में गमछी के चारों कोने फंसाकर पानी पर चित्त सो जाइए, नहीं डूबिएगा। नाव चालू हो गई।

नाव पानी पर दौड़ रही है। धार के विरुद्ध दौड़ रही है। नाव की बगल से नदी ढेर सारे सौगात लिये सफर पर है। जलकुंभियों के टुकड़े हाथियों की तरह दुलकते हुए ऐसे जा रहे हैं जैसे सोनवर्षा राज के जमींदार की विदाई हो। कौए, मैना, बगुले की लाशें बह रही हैं। सांप धार के साथ भागा जा रहा है। गाय, भैंस, कुत्ते, बिल्लियों के साथ आदमी की लाशें भी गंगा की ओर मोक्ष पाने दौड़ लगा रही हैं।

दूर थाह वाले रास्ते से भैंस पर चढ़कर किसान जा रहे हैं। कुछ लोग घोड़े खींचते हुए, कूद गाय बैल की नाथ पकड़े हुए पानी का थाह ले रहे हैं। सभी यात्रा पर हैं। जीवित भी मृत भी। किसान डोंगी से कमर से ऊपर ज्वार छपट रहे हैं। वरुण के बेटे मछलियों का जाल फैला रहे हैं। कुछ कृषक ऊंचे खेत में डूबे धान के सर पर से भासकर आई जलकुंभियां हटा रहे हैं। अस्तित्व बचाने की यह आखिरी लड़ाई है।

हम सहसौल पंचायत के घाट पर हैं। हजारों कंकालों का हुजूम। अर्द्ध नग्न बच्चे, बूढ़े, जवान। बाढ़ को आए पद्रह दिन हो गए। यहां आज से पहले कोई रिलीफ टीम नहीं आई है। यह महादलित पंचायत है। दलित मुखिया, दलित सरपंच। फिर भी राहत कार्य नहीं। अभी-अभी चिऊरा गुड़ लेकर एक नाव आई थी। लूट ली गई। दबंगों की दबंगई के कारण रिलीफ कार्य दंगे में बदल गया। गंदे पानी में डूबा कुछ बचा चिऊरा खाना पड़ रहा है। लोगों को पता है डाक्टर दवाइयां लेकर आ रहे हैं।

भूदानी बाबू सच्चिदानंद सिंह का दरवाजा ही डूब से बचा है। स्वास्थ्य शिविर खुल गया है। झोला छाप डाक्टरों ने चौकी पर दवाइयां बिछा दी हैं। हजार से ऊपर रोगी हैं। महिलाएं और बच्चे ज्यादा। डायरिया, बुखार, मलेरिया, कालाजार। सबसे बड़ा रोग भूख है। कुपोषण। चिपके हुए टायर की तरह बेढंगी जर्जर काया।

मैं आवाक् कि दस गांवों में बीएचयू से आए डाक्टर के रूप में पहले से प्रचारित हूं। एक क्वैक संचालन करते हैं। सबसे पहले बी.एच.यू. से आए डाक्टर साहब हमें कुछ बताएंगे। मैं कान में सटकर फुसफुसाता हूं। मैं डाक्टर नहीं हूं, वहां शिक्षक हूं। जी सर, मैं जानता हूं, वहां डाक्टर बनाने वाले डाक्टर होते हैं, वे सिर्फ पढ़ाते हैं। मैं हैरान। प्रतिष्ठा, अस्तित्व सब दांव पर। अभी उन्हें उत्साह, हिम्मत जैसे मनोविज्ञान की जरूरत है: भाइयो बहनो! आप लोग पानी पर ध्यान दीजिए उबाल कर पीजिए। नब्बे फीसदी रोग गंदे पानी के

कारण होते हैं। बासी खाना मत खाए। कपड़े साफ रखिए। मैं यह क्या बकबका रहा हूं। कहां से आएगा साफ पानी? लकड़ियां, माचिस, रोटी, सब्जी, सर्फ, साबुन, कपड़े ये सब कहां से आएंगे? छात्र निखिल कंपाउंडर की भूमिका में है। क्वैक पर्चा बनाने लगे हैं, दबा बंटने लगी है।

अब सांस लौटी। बगल में शोर हुआ। पडोस के गांव में हेलीकाप्टर पानी में माचिस, मोमबत्ती, ब्रेड फेंक रहा है। कई लोग लूटने के चक्कर में डूब रहे हैं। बड़ा अनर्थ है। सब हवा से आ रहा है। मेरे भीतर घमासान हो रहा है:

जो तुम्हें अन्न देते हैं/ वे स्वाद नहीं देंगे/जो नारे देते हैं/वे गीत नहीं देंगे/जो गोलियां देते हैं/वे हथेलियां नहीं देंगे/माचिस देने वाले लकड़ियां नहीं देते/जो मोमबत्तियां दे रहे हैं/ वे नहीं देंगे तुम्हें रोशनी।

आजादी के 61 साल बाद भी सहसौल अंधेरे में है। कोसी क्षेत्र अंधेरे में है। बिहार अंधेरे में है। देश की तरह। पुराने जमींदार एवं भूदानी बाबू सच्चिदानंद सिंह स्वतंत्रता संग्राम के दौर के प्रतीक हैं। उम्र81 वर्ष। फिर भी चेहरे में चमक और वाणी में खनक खूब है। गांव में लड्डू जी के नाम से मशहूर। 1942 के योद्धा। सहसौल और कोसी के मैला आंचल का इतिहास मेघ की तरह झरने लगता है।

''इलाके का पहला मलेरिया सेंटर मेरे गांव में 1934 में खुला। मेरी जमीन पर। बंगाली डाक्टर होते थे। खूब चलता था। सेवानिवृति के बाद वह आते थे। खूब आनंद भी उठाते थे। दूध, दही, माछ मिलता था। आज अस्पताल बंद है। जमीन अनुपयोगी हो गई है।

''1943 में मैं मधेपुरा के सिरीज इंस्टीट्यूट में पढ़ता था। दस टॉमी लड़कों ने हमें कहा कि रेलगाड़ी की पटरी पर बैलगाड़ी दौड़ाओ। हम कैसे दौड़ाते? वे हमें परेशान करते थे। टॉमी का अर्थ समझते हैं आप? कुंवारी मां से जन्मा बच्चा। अंग्रेजों को कहा जाता था।

''1942 में अंग्रेज टॉमियों की गांव पर चढ़ाई की बात हुई। तांत्रिक जी ने कहा गांव के चारों ओर सरसों छींट देंगे, टॉमी नहीं आएंगे। वे आते थे कोठी तोड़कर खेरी, सावां, धान सब मिला देते थे। चूल्हे पर झाड़ा-पेशाब कर देते थे।

''मैं 1960 में विनोबा भावे के भूदान आंदोलन से जुड़ा। पैदल यात्रा, साहित्यि बिक्री, बैठक, सभा सब कुछ किया। जो सोचा था, आजादी के बाद वैसा कुछ कुछ नहीं हुआ। अब तो संभव ही नहीं है। अंग्रेजों के कुत्ते बिस्कुट चबाते थे। हमारे बच्चे भूख से बिलबिलाते थे। आज भी वही हालत है। इस गांव में आज तक अलकतरा नहीं आया है।

''पुलिस बाढ़ पीड़ित का बलात्कार कर रही है, बापू कहते थे कि सारे वालेंटियरों को पुलिस सेवा में भेज दो और सारी पुलिस को वालेंटियर बना दो।''

पंचायत के सारे टोले- लालगंज, देवदत, गरेड़ीटोल, बिचला टोल, तिनधारा, पन्नापुर, सुरहभीता, बांकी भीता, बुच्चा टोल, कुमरगंज, मुकररीं जल की मार से जख्मी हैं। पन्नापुर मुसहरों का टोला है। बिल्कुल नदी के कंधे पर बैठा हुआ। फिर भी शांत, चुप, खामोश। सामुदायिक भवन में ताश चल रहा है। कोई फर्क नहीं। उन्हें पता है कि जिंदगी जैसे कट रही है वैसे ही कटेगी। कहीं से रोशनी की उम्मीद नहीं। बिना रोशनी के रहने की पुरानी आदत है। पूछने पर बताते हैं हर साल बाढ़ आती है। 'दीना भदरी' की कृपा से पंजाब-हरियाणा जिंदाबाद! यहां कोई काम ही नहीं है। इस साल रबी भी नहीं होगी। हम लोग जीतिया पर्व के बाद निकल जाएंगे। मेहरारू, बच्चे यहीं रहेंगे। मालिक के मोबाइल से पांच रुपए देकर वह बात कर लेती है। डाकघर भले दह गया पोस्टमेन चिट्ठी ही नहीं देता है घर पर। हमारे यहां कोई नहीं पढ़ता है जब चिट्ठी ही नहीं मिलेगी तो पढ़ने से क्या फायदा?

69 आर्मी रेजिमेंट के आखिरी बोट पर लाइफ सेवर पहनकर हम लौट रहे हैं। स्वास्थ्य शिविर अभी लगातार दिन रात काम करेगा। ढलते सूरज की रोशनी से नदी का जिस्म खूनी रंग का हो गया है। नदी में चांद ऐसा लग रहा है जैसे किसी सद्य:जात शिशु का पीलियाग्रस्त चेहरा हो।

रात के अंधेरे में राजमार्ग पर पानी को काटती हुई मोटर सौर प्रखंड के सिलेट गांव के राहत शिविर की ओर भाग रही है। गाड़ी में टेप डेक बजाना मना है। लोग इतने दुखी हैं कि गीत बजाने पर ड्राइवर को पीट देते हैं।

सिलेट के शिविर में तीन शिशुओं ने जन्म लिया है। नाम रखे गए है: बाढ़ पीड़ित, बालपीड़ित, कोसी। दर्जनों शिविरों में हजारों गर्भवती मांएं तबाह दुनियां को नए सृजन से भरने के लिए यातना सह रही हैं। क्या इस क्षेत्र की पूरी नई पीढ़ी त्रासदी और दहशत के ऐसे ही नाम प्रतीकों से बनेगी कोसी, बाढ़पीड़ित, जलप्रलय, कहर, तबाही, महाविनाश, कटान, धसान, तटबंध, राहत शिविर, मेगा शिविर, पुनर्वास आदि।

हम लोग अंधेरे को चीरते खादी ग्रामोद्योग की ओर जा रहे हैं। बीच सड़क पर एक अर्द्धनग्न बूढ़ी हाथ थाम लेती है- 'ऐं यो, इ जे बैनर कअ दूकान में दिन रात बैनर लिखाय रहलै हन। हम सब बैनरै खाइके जीवै।' फिर वह सीधे पश्चिम की ओर बढ़ जाती है। मेरे भीतर यह गूंज बार-बार उठ रही है: सुनिए! बैनर दुकान में दिन रात बैनर लिखे जा रहे हैं। क्या मैं बैनर खाकर ही जिंदा रहूंगी?

क्या एक लोकतंत्र सिर्फ बैनर, झंडे और डंडे खाकर जिंदा रह सकता है? इसका जवाब बाढ़ शिशु, कोसी और बाढ़पीड़ित देने की स्थिति में नहीं हैं।

(लेखक कवि, आलोचक तथा हिन्दी के प्राध्यापक हैं)

'सजन रे झूठ ही बोलो'

राघवेन्द्र दुबे

18-19 दिन भै गेलै... एकाएक पानी घुसलै त भागैलीये... पटुआ धोये के राखलीये, सब भैंस गेलै... आपन जिनगी में कहियो ऐहेन विनाश नै देखलीये... खाली जान लै के भागलीयै'।

सदानंद पासवान मेरे सामने खड़ा है। अपने पूरे अच्चों-बच्चों के साथ। यह एक मंदिर का ओसरा है। इससे बस थोड़ी ही दूर पर सूअर- उसके छौने, आदमी- उनके बच्चे और बांय-बांय करती गायें हैं। सूअर यानी जानवरों की एक नापाक श्रेणी। गाय कुछ के लिए पूज्य। और यहां आदमी माने इस सबसे बड़े जनतंत्र में बस हांक लिया जाने वाला वोट। कोसी ने सबका वजूद एक कर दिया है। फिलहाल इनके बीच कोई फिरका नहीं बांटा जा सकता। सूअर कीचड़ से लथपथ अपने छौनों के साथ और गाय अपनी गर्दन जमीन पर गिरा-फैला पसर गयी है। पासवान का बेटा भी यहीं एक फटी चटाई पर औंधे मुंह लेटा है। पासवान फिर कहे जा रहे हैं- कहियो ऐहेन विनाश...। मैं यहां भेड़वार ब्रम्होत्तर, अचरा पंचायत के पास सुरसर से करीब 5 मीटर पहले ही खड़ा हूं। अररिया से भीमनगर-वीरपुर जाने वाली सड़क यहीं से पानी में बिला गयी है। अररिया मुख्य कस्बे से उत्तर फारबिसगंज तकरीबन 30 किमी. है। यहां से बथनाहा होते मैं नरपतगंज पहुंचा हूं। नरपतगंज में ही सुरसर बांध टूटा है और यहीं से शुरू होती है तबाही। यहां पटुआ (जूट) और धान मुख्य फसल है, अब कह सकता हूं कभी रही होगी।

कोसी मेन कैनाल (सिंचाई परियोजना) सुरसर बांध का कलवर्ट था। कोसी इसे भी बहा ले गयी है। अपने निशान तक से। बताते हैं यह सिंचाई परियोजना इस इलाके के लिए वरदान से कम नहीं था। यह कैनाल घर-घर खुशहाली ले जाती थी। इलाकाई सम्पन्नता लोगों ने कभी कोसी में भी झांकी ही थी। इसी नहर के बूते। यह नहर अब नहीं रही। कोसी ने अगर यह इलाका छोड़ा भी तो अपने पीछे जैसा कि लोग बताते हैं कोढ़िया बालू छोड़ जायेगी। इससे तकरीबन 10 हजार हेक्टेयर से भी अधिक खेती की जमीन ऊसर हो जायेगी। कोसी का सीधा हमला जमीन की कुछ भी पैदा कर पाने की ताकत पर है। कोसी की जिद इलाके को बांझ बना कर छोड़ेगी। इसी कोसी मेन मैनाल से फूटी या निकली जेबीजी नहर बची रह गयी है, जो हजारों उजड़े परिवारों की रिहाइश बन रही है। नहर के किनारे-किनारे टूटे- लाचार और कोसी की मार से बदहवाश लोगों की जमीन और आसमान के बीच तकरीबन टंगी सी बस्तियां बन गयी हैं। यहीं सुरसर में मिल जाते हैं सृष्टिधर मिश्र। वो हाथ से इशारा करते बताते हैं- 'देखिये! सारी खेती तो अब नदी हो चली...।' वह छातापुर ब्लाक के रहने वाले हैं जो नरपतगंज और सुपौल के वार्डर पर है। बताते हैं कि वे लोग पानी में 16 दिन कैद रहे।

तमाम लोग ड्रम और केले के थम की नाव बनाकर तमुआ चौक होते अररिया भागे। पूरा ठूंठी-चापिन डूब गया। एक लड़का बताता है- 'रात तक रहे सारे घर सुबह अपनी नींव तक से गायब थे...। मैसेज मिला कि गांव में पानी आ सकता है...7 बजे। और 8 बजे घरों में हहरा कर पानी घुसा... तकरीबन पांच फुट तक। सब छत पर भागे। एक-एक पक्की मकान की छत पर 100-100 लोग। पानी अब पूरी धार के साथ बह रहा था। करेंट इतना कि पांव उखड़ जाये। जरा सा भी पांव अड़ाने की कोशिश में आदमी दो सौ मीटर तक उछल जायं.. ।' कोसी खेल गयी। लोगों की जिन्दगी से। उसने चलती सांसे घोंटी। फिर तो आबादी दर आबादी टांगने लगी।

किसी की, किसी राजनेता की भी मनौवल नहीं मानती। जाने कितनी अगरबत्तियां भी लोगों के कलजे की तरह सुलग-सुलग ठंडी हो गयी।

किसी को पता नहीं, ज्यादातर लोगों को भी नहीं कि, कोसी के इस ताडंव की वजह क्या है। ताकतवर वोट समूह न होने की वजह से ही शायद इन्हें कोई सपना भी न छू सका। सपने जो रचे जाते हैं सरकारी टकसाल में। जो नारों में सुर्ख होते हैं- केवल सपने। वे भी इन्हें कहां छू पाये। बस इतना ही फर्क है इनमें और फिल्म 'तीसरी कसम' के हीरामन में। इस्स...। हीरामन आंखों के सामने नाच गया है। 'सजन रे झूठ मत बोलो...' किससे कह रहा है हीरामन। हीरामन की लौ सी कंपकपाती बहुत ईमानदार मोहब्बत को कोई छू ही तो गया था, बस कुछ क्षणों के लिए। और यही उसकी थाती हो गयी। इन बाढ़ पीड़ितों को तो कोई कभी नहीं छू गया। कोई सपना नहीं। ये हीरामन नहीं हैं। या सबके सब हीरामन हैं, नहीं समझ पा रहा हूं। फिल्म तीसरी कसम की शूटिंग इन्हीं इलाकों में हुई थी। मेरा ड्राइवर वह जगह भी दिखा गया गढ़बनैली, जहां राजकपूर 'मैं चाह नहीं पीता' कहते-कहते एक लोटा चाय पी गये थे। पिंजरे वाली मुनिया का आलोक और महुआ घटवारिन का आख्यान सब कोसी चाट ले गयी। तीसरी कसम जिंदगी थी। यहां तो मौत है। दिमाग में सारा प्लाट पलट गया है। तब परती परिकथा के पन्ने फड़फड़ाने लगते हैं।

अब बथनाहा- श्यामनगर के बीच खड़ा हूं। यहां राहत कैम्प लगा है। मेडिकल का। डा. एम. एस. मारटीलियो- सशस्त्र सीमा बल के डीआईजी- मेडिकल से मुलाकात होती है। उन्होंने बताया- 'मेडिकल की दो मोबाइल यूनिट हैं जो गांवों में जा रही हैं। मरीजों का इनपुट कम हुआ है। गेस्ट्रो और डिहाईड्रेशन के मरीज ज्यादा आ रहे थे।' उनके चले जाने के बाद जहां से दवाईयां बांटी जाती है वहां चला आया हूं। यहां लोगों ने बताया कि कई दवाईयों की कमी है। मरीजों की आमद की लिहाज से उन्हें ब्रांको डाइलेटर, आई और ईयर ड्राप, रेनेटीडीन टैबलेट और एंटासीड चाहिए। अभी तक नहीं आ पाया है। देख रहा हूं दो-तीन औरतें दूर कहीं अपनी लाज छुपाये गठरी सी बनी बैठी हैं। इन्हीं लोगों ने बताया कि जच्चा-बच्चा के भी कई मामले आये और उन्हें रेफर कर दिया गया। सुरसर में नेशनल डिजास्टर रिस्पांस फोर्स बाढ़ पीड़ितों के लिए बहुत मददगार हैं। यहां उनका एक आफिसर, एक इंस्पेक्टर, तीन सब-इंस्पेक्टर, एक मेडिकल आफिसर और पैंतीस जवान हैं। दस स्पीड बोट आयी हैं। जिनकी स्पीड डेढ़ घंटे में अठारह किलो मीटर के करीब है। अगेंस्ट करेंट यह दूरी ढ़ाई घंटे में तय होती है। ये लोग 21 अगस्त से 3 सितम्बर तक फ्लड फाइटिंग में लगे रहे और बताते हैं कि तेरह हजार लोग बाढ़ से निकाल लिये गये हैं।

आदित्य कुमार ने बताया कि स्थिति सचमुच बहुत ही भयावह रही है- 'पानी सात फुट तक... औरतें छत पर... उन्हें उतारना बहुत ही मुश्किल हो रहा था। यहां फंसे लोगों को जवानों ने 'बैक स्ट्रोक' से निकाला। बैक स्ट्रोक में बचाने वाले का हाथ डूबने वाले की ठुड्डी (चिक) पर होता है। जवान डूबने वालों को धक्का देते हुए तैरा कर पानी से निकाल लेते हैं।..' वो बताते हैं कि सचमुच बड़ी खौफनाक स्थिति है। भगवान ने करे ऐसा कभी दुबारा हो। वह सिविल एडमिस्ट्रेशन की बाबत कोई बात बचा ले जाते हैं। मैं फिर वहीं आ गया हूं। मंदिर के पास। शिव मंदिर के कपाट बंद हैं। सदानंद पासवान जैसे कई की नजरें चौखट तक तड़प-तड़प कर गयी हैं। गायों की बांय-बायं और बकरियों की में-में तेज हो गयी है। एक बच्चे की पत्तल पर कुत्ते झपट्टा मारने वाले हैं। लेकिन मां का खून गरम नहीं ठंडा हो जाता है और कुत्ता भगाने के लिए दौड़ती वह खुद ढह जाती है। मैं यहां से चला आता हूं और परती परिकथा दिमाग में हरी हो रही है। हीरामन होता तो कहता- 'सजन रे झूठ ही बोलो।'

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं।)

संस्मरण

''बिछिया करे अनघोल...''

(5 सितम्बर, 1984 को पूर्वी कोसी तटबंध टूटने पर)

ओमप्रकाश भारती

सुनिए! सुनिए!! सुनिए!!!

''पूर्वी कोसी तटबंध के 72-78 कि. मी. के बीच कोसी का जलस्तर ख़तरे के निशान को पार कर चुका है। बाँध कभी भी टूट सकता है। नागरिकों को चेताया जाता है कि वे अपने घरों को ख़ाली कर सुरक्षित सथानों पर चले जाएँ... सुनिए...!''

तीन दिनों से जिला प्रशासन की गाड़ी गाँव की गलियों में दौड़ लगा रही है। दिन भर लोग घरेलू कार्यो में व्यस्त रहते, शाम होते ही भयभीत! कई रातों से पूर्वी तटबंध के बाहर के गाँवों में रतजगा चल रहा था। कोसी के गीतों का स्वर हर 'टोले' से सुनाई देता था। कई बार भगदड़ मची। कहीं से आवाज़ आती- ''भागो बाँध टूट चुका है।'' और सभी लोग घरबार छोड़ भाग खड़े होते थे। फिर थोड़ी देर के बाद पता चलता था कि झूट्ठो का हल्ला हुआ है तो कई लोगों की व्यंगपरक टिप्पणी सुनाई देती ''हम कह रहे हैं कि बान्ह नैय टूटेगा, झूठ का हल्ला कर दिया कि घर सब ख़ाली कर दो... इधर सब भागो उधर घरों में लूटपाट शुरू; ख़ूब समझते हैं इन चोर-डकैतों की चाल को।''

इन्हीं गाँवों में से एक था मेरा ननिहाल 'परसबन्ना', जो कई बार कोसी की 'कटनियाँ, में कट चुका था। तंग आकर लोगों ने तटबंध के बाहर घर बसाया था। लेकिन इस अभागे गाँव के लोगों को चैन कहाँ मिलना था। यहाँ भी कोसी उसे एक बार फिर से सताने की योजना बना चुकी थी। कोसी की तबाहियों से निपटने का साहस परसबन्ना के लोग जुटा रहे थे। घरों को ख़ाली कर सुरक्षित स्थानों पर सामानों को रखा जा रहा था। नाना जी बार-बार मामा जी को हिदायत दे रहे थे कि हम लोगों को अपने पैतृक गाँव पहुँचा दिया जाए। लेकिन हम जाने को तैयार नहीं थे। बार-बार बहाना बना कर टाल देते थे। कौन-सा बाँध अभी टूटने जा रहा है। जो होगा, देखा जाएगा। दस दिनों से लोग रतजगा कर थक चुके थे। कई लोग बाहर किए गए सामानों को पुनः घर ले आए। सब कुछ धीरे-धीरे सामान्य हो रहा था। हमलोग रात्रि भोजन के बाद सोने चले गए। लेकिन 'झबरा' अपने मित्रों के साथ लोगों को जगाने में जुटा था। वह आकाश की ओर ताकते हुए ''भोंऽऽऽभोंऊँ...'' की आवाजें लगा रहा था। मुझे नींद नहीं आ रही थी। 'झबरे' की आवाज़ किसी अभिशप्त मानव का शोकगान लग रहा था। किसी ने खाँसते हुए कहा- ''कुत्तों का रोना अच्छा नहीं माना जाता है, साइत अच्छा नहीं है।'' बैगना (गाँव का चौकीदार) ने लाठी पटकते हुए आवाज़ लगाई ''जागऽ जागऽ जागऽ होऽऽऽ...।'' अचानक शाहपुर की ओर से आवाज़ आई- ''दोहाई कोसी माई की! कोसी मइया की जै हो... रन्नू सरदार की जै हो!! घुटरा रोऽऽ टुटलौ बाँध...!!! त्राहिमाम!!! भगदड़! ''हौ जोगिन्दर गाय-भैंस खोलि दहक हौ... भागि जैते बान्ह पर।'' या खुदा! आमीन... कहर, बख़्स दो; रे सुलेमान! अमीना रह गेलो घरे में रेऽऽऽ!''-शेख़टोली से आवाजें आई। 'मिसरोलिया' में कुछ महिलाएँ गीत गा रही थी, उनका स्वर और भी तेज हो गया-

कथी ले रोपलियै हे कोसी माय/ आम जामुन गछिया हेऽ/
कथी ले बान्हिलिये घर हेऽ...।

किसी ने डाँटते हुए कहा- ''पोधनी पसारने छै, बान्ह टूटि गेलै भाग नै।'' प्रलय! सभी लोग गिरते-पड़ते रात के अँधेरे में सुरक्षित स्थानों की ओर भागने लगे। कई लोग घर की छप्पड़ पर चढ़ गए। चारों दिशाओं से चीख़-पुकार सुनाई देने लगी।

आख़िरकार 4 सितम्बर 1984 की आधी रात को सरकारी हल्लागाड़ी से आवाजें आने लगीं- ''बाँध टूट चुका है...!''

देखते ही देखते हेमपुर, बलवा, नौहट्टा, शाहपुर, परसबन्ना, मुरादपुर चन्द्रायण, जोड़ी आदि कई गाँव जल विलीन हो गए। चीख़, क्रंदन की जगह पानी की कल-कल सुनाई देने लगा। कुछ लोग घर के छतों पर चढ़ गए बाकी प्राणियों ने भागकर तटबंध पर आश्रय लिया। अब वे दो समंदर के बीच फँसे थे। तीस फुट चौड़ा तटबंध की दोनों तरफ़ अथाह जल था। इस पर आश्रय लिए प्राणियों का सम्पर्क दुनियां के सभी भागों से कट चुका था। भागते हुए लोग चावल, गेहूँ और खाने की कुछ अन्य सामग्री तो बचा पाए थे, लेकिन इंधन बचाने का समय नहीं देना कोसी ने तय कर रखा था। तिसपर प्रकृति की निर्ममता बढ़ती ही जा रही थी। आसमान फ़ट पड़ा। तेज़ आँधी के साथ बौछारें। सूँ... सूँ... साएँऽऽ... फड़फड़ऽऽऽ चलती तेज़ दानवी हवा के बीच लोगों का साहस जबाव देने लगा। सामूहिक गीतों के थरथराते स्वर फूटने लगे- ''गोर तोरा लागै छिअ हो बाबा डिहवार, गरुबेरा कोसी माय के दियो नै मनाय...! नवजात शिशुओं को माँ ने छाती से चिपका लिया! अभागे नवजात को रात भर ठंढे और गरम पानी के बीच रात काटनी पड़ी। जो संघर्ष कर जीत गए, वे जीवित बचे। बाक़ी निमोनिया में 'टें' बोल गए। न डॉक्टर, न दवाई। सिर्फ़ सांत्वना- चाचा, नाना, दादी की। विपत्तियों में फँसे प्राणियों का आश्चर्यजनक साहचर्य! हुड़हा बैल ने किसी को 'हुड़ा' नहीं, खूनी साँढ़ ने अपने सींग कटवा लिए, कुचले जाने पर भी विषधर ने किसी को डँसा नहीं।

लोगों को अपनी जान बचाना मुश्किल हो रहा था, पशुओं का क्या करें। पशु भी अपने मालिक पर आये विपदा को समझ रहे थे। दो-तीन दिनों से भूखे, खामोश दुबके तीन-चार फीट पानी में खड़े थे। लोगों से उनकी हालत देखी नहीं जा रही थी। खुद खड़े होने की जगह नहीं... उसे कहाँ आश्रय दें। धैर्य जवाब दे गया, लोग गाय, भैंस, बैल को दूब-धान देकर कोसी को अर्पित कर रहे थे- ''हमें खुद बचने की आशा नहीं है, तुम्हें कहाँ से बचाएंगे! जाओ, कोसी माय ही तुम्हें बचाएंगी।''- लेकिन वे टस-मस नहीं हुए। वहीं खड़े रहे, जब तक की तेज धार उसे बहा नहीं ले गई।

सुबह होने को आया। मुर्गे बांग देने की बजाय दुबके रहे। होंए...होंए डकारती कोसी की भँवरों की चपेट में समूचा पश्चिमी सहरसा जिला आ चुका था। जिन खेत, ख़लिहानों और उपवनों को बीते कल सूर्य की किरणों ने अंतिम चुम्बन दान दिया था, वहाँ आज कोसी प्रलय का तांडव कर रही थी। तीसरे दिन तक पानी सलखुआ पहुँच गया था। हजारों गाँव भयंकर बाढ़ और भुखमरी की चपेट में आ गए। मुरादपुर में छत पर आश्रय लिए साठ लोग पानी में बह गए। बनगाँव में सड़क पार करते युवक को भँवरें निगल गई। कई स्वयंसेवी संस्थाओं ने राहत कार्य आरंभ किया। सहरसा के पटेल मैदान में बाढ़ में फँसे लोगों काएकत्र किया गया।

उधर कोसी बाँध पर फँसे लोगों का चूल्हा तीसरे दिन भी ठंडा रहा। सहरसा से बाँध पर सम्पर्क साधना व्यक्तिगत साधन से संभव नहीं हो पा रहा था। वर्षा के कारण पहले ही गेहूँ, चावल भींग चुके थे। भूख की वहशी बुलंदी ने उसे ही खाने पर मजबूर किया। कुछ लोग जो जलावन बचा पाए थे, वे सोने-चाँदी की कीमत में उसे बेच रहे थे।

जिसके पास कुछ नहीं बचा था। वे अपने बच्चों के साथ आकाश की ओर टकटकी लगाए थे... शायद भगवान ही कुछ दे दें। भगवान ने उनकी सुन ली... हुँऽऽ हुँऽऽ करते हुए हेलीकाप्टर आकाश में घुमरने लगे। बाट जोहती आँखें ने आवाज़ें लगाई ''इनरा गान्ही की जै हो... इनरा गान्ही अमर रहे!'' लोगों को लगा कि इन्दिरा गाँधी

(भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री) उसे देखने आई हैं। इतने में आकाश से कुछ टपकने लगे। लोग डरकर इधर-उधर भागने लगे। गाँव के मुखिया ने सबको रोकते हुए कहा ''रिलीफ़, रिलीफ़! घबराइये नहीं, सरकार की ओर से रिलीफ़ बाँटा जा रहा है। उसके बाद का दृश्य और भी बीभत्स हो गया। लोगों की भीड़, गिराए गए रोटी, चूड़ा के थैलियों पर टूट पड़े। कई लोग के हाथ सिर्फ़ थैले का आधा भाग लगा, रोटी को टुकड़ों में कई लोगों ने झपट लिया। आधी से अधिक रशद छीना-झपटी से मिट्टी में सन गई। कुछ लोगों के हाथ-पैर छिल गए। जिनके हाथ कुछ लगा, वे जल्दी-जल्दी निगलने लगे। जिन्होंने आवश्यकता से अधिक बटोर लिया था, वे बेचने भी लगे। सिर्फ़ लाचार थे 'बौनी मड़र', जो जन्म से ही बौने थे। उनके आगे-पीछे कोई नहीं था। दो चार पद भगैत गाकर और फकड़ा सुनाकर लोगों का मन बहलाया करते थे। लोगों को रुचा तो रोटी का एकाध टुकड़ा उन्हें मिल जाया करता था। लेकिन आज किसे अवकाश है 'भगैत' और 'फकड़ा' सुनने का। बौने होने के कारण 'बौनी मड़र' रोटी भी नहीं लूट सकते थे। तो क्या हुआ? अँधेरा होते ही 'बौनी मड़र' कीचड़ में बिखरे रोटी के टुकड़े चुन रहे थे... आँखें इधर-उधर भी देख रही थी। कोई उसे देख तो नहीं रहा है...? उसे भिखमंगा कहेगा!

मैं रात भर उनीद्रा में 'बौनी मड़र' के बारे में सोचता रहा। नाना जी भिनुसरा ही जगते हैं। हमें भी सुबह की पहली खेप की नाव से गाँव जाना था। हम भी जग चुके थे। पूरब दिशा में क्षीतिज पर लाली फैलने लगी थी... बौनी मड़र ऊँची आवाज़ में कोसी का गीत अलाप रहे थे-

गाम-गाम धुपबा दियेलै माय कोसिका/मैया तोरा नहि माया दरेग
बिछिया करे अनघोल/ डेढ़ी-डेढ़ी नैया गे माय कोसिका घाट-घाट चढ़ेलौं लडुवा/ गे मैया बिछिया करे अनघोल/
धारे-धारे चढ़ेबौ गे कोसिका
खस्सी, पाठी मिठइया/ गे मैया बिछिया करे अनघोल।

हे माय कोसिके! गाँव के गाँव तुमने मृत्यु के आगोश में डाल दिया। मैया! तुम्हें ममत्व और दया नहीं है? बिछिया आर्त्तनाद कर रही है (अपने सुहाग के उजड़ने से स्त्रियाँ आर्त्तनाद कर रही है)। तुम्हारी बाढ़ के कारण डेढ़ी-डेढ़ी पर नाव लगी है। घाट-घाट पर हमने लड्डू चढ़ाया। हे मैया, तब भी बिछिया आर्त्तनाद क्यों कर रही है? इसे रोको, दया करो हम पर, घाट-घाट पर खस्सी-पाठी की बलि दूँगी, मिठाई चढ़ाऊँगी... हे मैया, बिछिया आर्त्तनाद कर रही है!

प्रेरक

सरकार का मुंह ताकने के बजाय खुद नदी की सफाई करनी चाहिए

-संत बलबीर सिंह

गुरुचरन

अपने गांव सीचेवाल की दलित बस्ती के खराब रास्तों को दुरुस्त करके 'सड़कों वाला बाबा' कहलाए इस सिख संत संत बलबीर सिंह की मान्यता है कि जन सेवा ही परमात्मा को याद करने का रास्ता है। गुरु नानक ने 'एक ओंकार सतनाम' के मूलमंत्र का जाप पंजाब की 'काली वेंई' नहीं में स्नान करके किया था। उस पवित्र नदी के प्रदूषित होने पर चिंतन के लिए आयोजित एक गोष्ठी में संत ने कहा कि ''सरकार का मुंह ताकने के बजाय खुद नदी की सफाई करनी चाहिए।'' अगले ही दिन से वे इस काम में जुट भी गए, फिर इस नदी सफाई अभियान में लोग भी उमड़े और 160 किमी की प्रदूषित नदी स्वच्छ निर्मल धारा में पुनर्जीवित हो गई 'टाइम' पत्रिका द्वारा 'हीरोज ऑफ द एनवायरनमेंट' में चुने गए बलबीर सिंह सीचेवाल।

सीचेवाल कहते हैं कि-मैं समझता हूं कि आज मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे या चर्च में परमात्मा को कैद करने के बजाय उसे चारदीवारी से बाहर लाकर लोगों से जोड़ने की जरूरत है। इंसान परमेश्वर की खूबसूरत कृति है। उसे समस्याओं से मुक्ति की रास्ता दिखाना परमात्मा की असली अराधना है। कालीवेंई बाबा नानक से जुड़ी नदी है। अपने हाथों सेवा करने की सिख धर्म की परंपरा ही हमारे अभियान की जान है। हमारे अभियान में स्त्रियों ने पुरुषों के बराबर कंधे से कंधा मिलाकर काम किया। लोग ऐसे काम के लिए सरकार पर ही निर्भर रहते हैं? सरकार के भरोसे जैसा काम होता है वह सबके सामने है। हजारों करोड़ रुपए खर्च करके भी गंगा की सफाई का काम पूरा नहीं किया जा सका। एक एरिया के लोग मेरे पास आकर बोले कि उनकी म्युनिस्पल कमेटी की सालाना आमदनी एक करोड़ रुपए है। सीवरेज का खर्च 90 लाख रुपए आंका गया है। ये काम हमने अपने हाथ में लिया। जनता की भागीदारी से इस काम में कुल खर्चा पांच लाख रुपए आया और 15दिनों में यह काम पूरा भी हो गया *(साभार, सेंटिनल हिन्दी दैनिक गुवाहटी, 20 अक्टूबर 2008)*

पुस्तक समीक्षा

नदियां गाती हैं

कोसी नदी का लोकसांस्कृतिक अध्ययन

अनुपम

डा. ओमप्रकाश भारती की पुस्तक **नदियां गाती हैं** – कोसी नदी का लोकसांस्कृतिक अध्ययन का द्वितीय संस्करण पढ़ रहा था, उसी झण टीवी पर खबर देखा, कोसी अंचल में जल प्रलय! और मैं कठिन समय में चला गया, जहाँ मेरे लिये दृश्यों के साथ शब्द थे।

नादियां गाती हैं, डॉ. ओमप्रकाश भारती की एक महत्वपूर्ण पुस्तक है जिसमें कोसी नदी के जीवन से संबंधित भूगोल, इतिहास और समाजशास्त्र को वैज्ञानिक तरीके से खोजने का प्रयास किया गया है। मिथिलांचल के लोग 'कोसी' नाम की वेदना का मर्म अच्छी तरह जानते हैं। इस पुस्तक की खासियत है कि इस अकेली पुस्तक में न केवल साहित्य की कई विधाओं का वरन् समाज विज्ञान के कई विषयों का भी समावेश है। 'कोसी: उद्गम से संगम' तक अध्याय में कोसी के उत्पत्ति-स्थल से लेकर विभिन्न मार्गो के माध्यम से बिहार तक पहुंचने का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय को पढ़ते हुए लगता है मानो नदी-मार्ग पर भूगोल की कोई पुस्तक पढ़ रहे हो। कोसी के उद्गम-स्थल, सप्तकौशिकी क्षेत्र, कोसी की छाड़न धाराएं-सबका ब्योरा लेखक ने मानचित्र सहित दिया है। यह अध्याय एक तरह से कोसी के गीतों की पूर्वपीठिका भी है क्योंकि उसकी भौगोलिक नियति ही उसे तबाही मचाने के लिए मजबूर करती है और इस तबाही की मार्मिक कराहों के भीतर से जन्मता है-कोसी से संबंधित लोकगीत। लेखक ने स्पष्ट लिखा है:

'लगभग प्रत्येक 35-40 वर्षों पर कोसी अपने प्रवाह मार्ग को बालू मिट्टी से भरकर अवरुद्ध कर देती है। जान-माल की तबाही मचाते हुए नया प्रवाह मार्ग बना लेती है। इन तबाहियों के कारण ही असंख्य लोकहृदय दर्द से कराह उठते हैं, उनका दर्द स्वर और लय के साथ गीत का रूप लेता है। जिस गीत को गाकर कोसी निवासी जीवन को रागात्मक बनाते हैं। उनके जीवन में उत्साह और ऊर्जा का संचार होता है। यही उत्साह और ऊर्जा उन्हें जीवन की चुनौतियों से सामना करने का अदम्य साहस प्रदान करता है।'

इतिहास केवल वही नहीं होता जिसे हम इतिहास की पाठ्य-पुस्तकों में अथवा महान् इतिहासविदों की ज्ञानवर्धी पुस्तकों में पढ़ते हैं। इतिहास का एक क्षेत्रीय पाठ भी होता है जो लोक जीवन के सच्चे अनुभवों, मान्यताओं और धार्मिक धारणाओं से बनता है। इतिहास का यह क्षेत्रीय पाठ ज्ञान की मुख्य धारा का अंग भले ही न बन पाए, लेकिन लोक जीवन तो इसी से संचालित होता है। जीवन तो इस इतिहास में ही धड़कता है। 'कोसी: मिथ और लोक इतिहास' नामक अध्याय में लेखक ने कोसी से संबंधित लोक इतिहास, किवदंतियों और मिथक-कथाओं को एक स्थान पर संकलित किया है। नदी और मानव जीवन के अन्त:सम्बंधों और अन्तर्द्वन्दों का अदभुत समाजशास्त्रीय अन्वेषण पुस्तक की विशेषता है। कोसी के गीतों का संगीत एवं पुरासंगीतशास्त्रीय विश्लेषण लोकसाहित्य के अध्ययन को नया आयाम देता है। कोसी के लोगों के पारम्परिक ज्ञान-अध्याय में लोकज्ञान और उसकी महत्ता को रेखांकित किया गया है।

कोसी गीतों के संकलन के लिए यायावर बना लेखक जब अपनी यात्राओं का वर्णन करता है तो उसकी भाषा अत्यन्त सर्जनात्मक हो उठती है और इन यात्राओं को पढ़ने पर पाठक को रोमांच एवं जिज्ञासा से पगे उत्तम कोटि के यात्रा-वृतांत का आनंद प्राप्त होगा। भाषा का एक नमूना देखें: *'बस चल पड़ी। हूं करते सर्पीली पहाड़ी ढलान पर रेंगने लगी। मनमोहक प्राकृतिक वादियों में हम खो चुके थे। सागवान, महुआ और साल के गगनचुंबी बूढ़े*

वृक्षों की तलहटी में नवजात छोटे-छोटे पोते वृक्षों की खिलखिलाहट, किलकारियां प्रकृति को रम्य और रागात्मक बना रहे थे। घाटियों में बिखरी जलराशियां पुरातन भाषा में कुछ गुनगुना रही थीं।' इसे जीवंतता की भाषा कह सकते हैं।

कोसी की तबाही का साक्षी लेखक का बचपन स्वयं रहा है। आंखों देखी त्रासदी को उसने 'कोसी की गोद' नामक अध्याय में साकार किया है। कोसी नदी से संबंधित तीन लोमहर्षक त्रासदियों का वर्णन भी है। 06 जून 1981 ई. को पुल टूटने के कारण समस्तीपुर-बनमनखी 416 डाउन पैसेंजर ट्रेन कोसी नदी में गिर गयी थी। दो अन्य लोमहर्षक घटनाओं में कोसी में आयी बाढ़ और सहरसा जाने वाली बस के तीस यात्रियों के कोसी में डूबने की घटना है। प्रीडो द्वारा संग्रहित कोसी के गीत जो मार्च 1943 में 'मेन इन इंडियां में प्रकाशित हुए थे, उन्हें भी यहां शामिल किया गया है। नदी के बहाने लोकजीवन पर प्रकाश डालने वाली यह पुस्तक पठनीय भी है और संग्रहणीय भी।

नदियां गाती हैं- कोसी नदी का लोकसांस्कृतिक अध्ययन/ ओमप्रकाश भारती
प्रकाशक-धरोहर प्रकाशन, 251 सत्यम एनक्लेव, गाजियाबाद-201005
प्रकाशन वर्ष-2002(प्रथम संस्करण), 2008 (द्वितीय संस्करण) मूल्य 55रु.।